4. **अंग्रेजी शिक्षा का विरोध** – भारतेन्दु युगीन कवियों ने अंग्रेजी भाषा तथा अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार-प्रसार के प्रति अपना विरोध कविताओं में प्रकट किया है।

5. **विभिन्न काव्य रूपों का प्रयोग** – इस काल में काव्य के विविध रूप दिखाई देते हैं जैसे मुक्तक काव्य, प्रबन्ध काव्य आदि।

6. **काव्यानुवाद की परम्परा** – मौलिक लेखन के साथ-साथ संस्कृत तथा अंग्रेजी से काव्यानुवाद भी हुआ है।

भारतेन्दु युगीन प्रमुख कवि	रचनाएँ
1. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	प्रेम सरोवर, प्रेम फुलवारी, वेणु गीति, प्रेम मल्लिका।
2. बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन	जीर्ण जनपद, आनन्द अरुणोदय, लालित्य लहरी।
3. प्रताप नारायण मिश्र	प्रेम पुष्पावली, मन की लहर, शृंगार विलास।
4. जगमोहन सिंह	प्रेम सम्पत्ति लता, देवयानी, श्यामा सरोजिनी।
5. अम्बिका दत्त व्यास	भारत धर्म, हो हो होरी, पावस पचासा।
6. राधाचरण गोस्वामी	नवभक्त माल।

द्विवेदी युग

यह युग कविता में खड़ी बोली के प्रतिष्ठित होने का युग है। इस युग के प्रवर्तक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी हैं। इन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका का सम्पादन किया। उन्होंने इस पत्रिका में ऐसे लेखों का प्रकाशन किया जिन्होंने नवजागरण का संदेश जन-जन तक पहुँचाया। इस पत्रिका ने कवियों की एक नई पौध तैयार की। इस काल में प्रबंध काव्य भी पर्याप्त संख्या में लिखे गए। अनेक कवियों ने ब्रजभाषा छोड़कर खड़ी बोली को अपनाया। इस काल में खड़ी बोली को ब्रजभाषा के समक्ष काव्य भाषा के रुप में प्रतिष्ठित किया गया, साथ ही विकसित चेतना के कारण कविता नई भूमि पर प्रतिष्ठित हुई। एक ओर खड़ी बोली व्याकरण सम्मत, परिष्कृत एवं संस्कारित रूप ग्रहण कर रही थी दूसरी ओर कविता में लोक जीवन और प्रकृति के साथ ही राष्ट्रीय भावना की समर्थ अभिव्यक्ति हो रही थी। इस समय के प्रबन्ध काव्य में कवियों ने पौराणिक और ऐतिहासिक कथानक को आधार बनाया। इस युग में ऐतिहासिकता, पौराणिकता में भी राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रीय भावना का स्वर ही उभरकर सामने आता है।

द्विवेदी युगीन कविताओं की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं –

1. **देशभक्ति** – द्विवेदी युग में देशभक्ति को व्यापक आधार मिला। इस काल में देशभक्ति विषयक लघु एवं दीर्घ कविताएँ लिखीं गईं।

2. **अंधविश्वासों तथा रूढ़ियों का विरोध** – इस काल की कविताओं में सामाजिक अंधविश्वासों और रूढ़ियों पर तीखे प्रहार किए गए।

3. **वर्णन प्रधान कविताएँ** – 'वर्णन' प्रधानता इस युग की कविताओं की विशेषता है।

4. **मानव प्रेम** – द्विवेदी युगीन कविताओं में मानव मात्र के प्रति प्रेम की भावना विशेष रूप से मिलती है।

5. **प्रकृति-चित्रण** – इस युग के कवियों ने प्रकृति के अत्यन्त रमणीय चित्र खींचे हैं। प्रकृति का स्वतन्त्र रूप में मनोहारी चित्रण मिलता है।

6. **खड़ी-बोली का परिनिष्ठित रूप** – इस युग की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है खड़ी बोली में काव्य रचना। खड़ी बोली हिन्दी को सरल, सुबोध तथा व्याकरण सम्मत परिनिष्ठित स्वरूप प्रदान किया गया।

द्विवेदी युगीन प्रमुख कवि	रचनाएँ
1. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'	प्रिय प्रवास, वैदेही वनवास, चुभते चौपदे, रसकलश।
2. मैथिलीशरण गुप्त	पंचवटी, जयद्रथ-वध, भारत-भारती, साकेत, यशोधरा।
3. रामनरेश त्रिपाठी	मिलन, पथिक, स्वप्न, मानसी।
4. माखनलाल चतुर्वेदी	हिमकिरीटिनी, हिमतंरगिनी, युगचरण, समर्पण।
5. महावीर प्रसाद द्विवेदी	काव्य मंजूषा, सुमन।

छायावाद – हिन्दी साहित्य के आधुनिक चरण में द्विवेदी युग के पश्चात् हिन्दी काव्य की जो धारा विषय वस्तु की दृष्टि से स्वच्छंद प्रेमभावना, प्रकृति में मानवीय क्रिया कलापों तथा भाव-व्यापारों के आरोपण और कला की दृष्टि से लाक्षणिकता प्रधान नवीन अभिव्यंजना-पद्धति को लेकर चली, उसे 'छायावाद' कहा गया। डॉ. नगेन्द्र ने 'स्थूल के प्रति सूक्ष्म के विद्रोह' को छायावाद माना है। प्रकृति पर चेतना के आरोप को भी छायावाद कहा गया है। आचार्य शुक्ल ने 'प्रस्तुत' के स्थान पर उसकी व्यंजना करने वाली छाया के रूप में 'अप्रस्तुत कथन' को छायावाद माना है। छायावाद के प्रमुख कवि जयशंकर प्रसाद ने छायावाद की व्याख्या इस प्रकार की है– ''छायावादी कविता वाणी का वह लावण्य है जो स्वयं में मोती के पानी जैसी छाया, तरलता और युवती के लज्जा भूषण जैसी श्री से संयुक्त होता है। यह तरल छाया और लज्जा श्री ही छायावादी कवि की वाणी का सौंदर्य है।''

द्विवेदी युग की इतिवृत्तात्मकता, स्थूलता और नैतिकता के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में छायावादी कविता का विकास हुआ। छायावाद में सामूहिकता के विरुद्ध वैयक्तिकता, रूढ़िवादिता के विरुद्ध स्वच्छंदता, स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह, बौद्धिकता एवं यथार्थ के प्रति भावुकता तथा कल्पना और अभिधा प्रधान वर्णनात्मक शैली की प्रतिक्रिया में लाक्षणिक प्रतीकात्मक शैली की व्यापक अभिव्यक्ति हुई है।

छायावाद के कवियों को जहाँ एक ओर बांग्ला साहित्य और विशेषकर कवीन्द्र रवीन्द्र से प्रेरणा प्राप्त हुई, वहीं दूसरी ओर वर्ड्सवर्थ, शैली, टेनीसन, कीट्स और बायरन जैसे अंग्रेजी भाषा के कवियों का भी इस काल के कवियों पर प्रभाव पड़ा। रूढ़िवाद का विरोध हुआ। इस युग का कवि मानवतावादी दृष्टिकोण लेकर चला। प्रकृति को चेतन बनाया और उसका मानवीकरण किया। प्रसाद, पंत, निराला तथा महादेवी छायावाद के आधार स्तम्भ कहे जाते हैं।

छायावादी काव्य की विशेषताएँ –

1. **व्यक्तिवाद की प्रधानता** – छायावाद में व्यक्तिगत भावनाओं की प्रधानता है। वहाँ कवि अपने सुख-दुख एवं हर्ष-शोक को ही वाणी प्रदान करते हुए खुद को अभिव्यक्त करता है।
2. **शृंगार भावना** – छायावादी काव्य मुख्यतया शृंगारी काव्य है किन्तु उसका शृंगार अतीन्द्रिय सूक्ष्म शृंगार है। छायावाद का शृंगार उपभोग की वस्तु नहीं, अपितु कौतूहल और विस्मय का विषय है। उसकी अभिव्यंजना में कल्पना और सूक्ष्मता है।

3. **प्रकृति का मानवीकरण** – प्रकृति पर मानव व्यक्तित्व का आरोप छायावाद की एक प्रमुख विशेषता है। छायावादी कवियों ने प्रकृति को अनेक रूपों में देखा है। कहीं उसने प्रकृति को नारी के रूप में देखकर उसके सूक्ष्म सौन्दर्य का चित्रण किया है।

4. **सौन्दर्यानुभूति** – यहाँ सौन्दर्य का अभिप्राय काव्य सौन्दर्य से नहीं, सूक्ष्म आंतरिक सौन्दर्य से है। बाह्य सौन्दर्य की अपेक्षा आंतरिक सौन्दर्य के उद्घाटन में उसकी दृष्टि अधिक रमती है। सौन्दर्योपासक कवियों ने नारी के सौन्दर्य को नाना रंगों का आवरण पहनाकर व्यक्त किया है।

5. **वेदना एवं करुणा का आधिक्य** – हृदयगत भावों की अभिव्यक्ति की अपूर्णता, अभिलाषाओं की विफलता, सौन्दर्य की नश्वरता, प्रेयसी की निष्ठुरता, मानवीय दुर्बलताओं के प्रति संवेदनशीलता, प्रकृति की रहस्यमयता आदि अनेक कारणों से छायावादी कवि के काव्य में वेदना और करुणा की अधिकता पाई जाती है।

6. **अज्ञात सत्ता के प्रति प्रेम** – अज्ञात सत्ता के प्रति कवि में हृदयगत प्रेम की अभिव्यक्ति पाई जाती है। इस अज्ञात सत्ता को कवि कभी प्रेयसी के रूप में तो कभी चेतन प्रकृति के रूप में देखता है। छायावाद की यह अज्ञात सत्ता ब्रह्म से भिन्न है।

7. **नारी के प्रति नवीन भावना** – छायावाद में शृंगार और सौन्दर्य का संबंध मुख्यतया नारी से है। रीतिकालीन नारी की तरह छायावादी नारी प्रेम की की पूर्ति का साधनमात्र नहीं है। वह इस पार्थिव जगत की स्थूल नारी न होकर भाव जगत की सुकुमार देवी है।

8. **जीवन-दर्शन** – छायावादी कवियों ने जीवन के प्रति भावात्मक दृष्टिकोण को अपनाया है। इसका मूल दर्शन सर्वात्मवाद है। सम्पूर्ण जगत मानव चेतना से स्पंदित दिखाई देता है।

9. **अभिव्यंजना शैली** – छायावादी कवियों ने अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए लाक्षणिक, प्रतीकात्मक शैली को अपनाया है। उन्होंने भाषा में अभिधा के स्थान पर लक्षणा और व्यंजना का प्रयोग किया है।

प्रमुख छायावादी कवि	रचनाएँ
1. जयशंकर प्रसाद	कामायनी, लहर, आँसू, झरना।
2. सुमित्रानंदन पंत	पल्लव, ग्रंथि, गुंजन, वीणा, उच्छवास।
3. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला	परिमल, गीतिका, अनामिका, तुलसीदास।
4. महादेवी वर्मा	रश्मि, नीरजा, नीहार, सांध्यगीत।
5. रामकुमार वर्मा	निशीथ, चित्र-रेखा, आकाशगंगा।

रहस्यवाद

हिन्दी कविता में रहस्यवाद का काल निर्धारण करना कठिन है क्योंकि रहस्यवाद सृष्टि के आरंभ से ही कवियों को प्रिय रहा है। वेदों में ऊषा, मेघ, सरिता आदि के वर्णन में अव्यक्त परमात्मा के स्वरूप को लक्ष्य किया गया है। यह प्रकृति और जगत ही रहस्यमय है। कण-कण में परमात्मा के होने का आभास ही रहस्यवाद है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने रहस्यवाद की परिभाषा इस प्रकार की है– ''चिंतन'' के क्षेत्र में जो अद्वैतवाद है, भावना

के क्षेत्र में वही रहस्यवाद है।'' जहाँ कवि इस अनन्त परमतत्व और अज्ञात प्रियतम को आलम्बन बनाकर अत्यंत चित्रमयी भाषा में प्रेम की अनेक प्रकार से व्यंजना करता है, वहाँ रहस्यवाद है। रामचंद्र शुक्ल ने रहस्यवाद को भारतीय साहित्य की विशिष्ट उपलब्धि माना है।

बाबू गुलाबराय ने ''प्रकृति में मानवीय भावों का आरोप कर जड़ चेतन के एकीकरण की प्रवृत्ति के लाक्षणिक प्रयोगों को रहस्यवाद कहा है। '' मुकुटधर पांडेय के अनुसार ''प्रकृति में सूक्ष्म सत्ता का दर्शन ही रहस्यवाद है।'' हिन्दी काव्य में छायावादी प्रवृत्ति के जन्म के बहुत पहले कबीर, जायसी, मीरा आदि में रहस्यवाद अपनी पूर्ण गरिमा के साथ विद्यमान है। काव्य में जहाँ भी आत्मा के परमात्मा से मिलकर एकाकार होने की स्थिति की अभिव्यक्ति है वहीं रहस्यवाद है। आधुनिक काल की कविता में रहस्यवाद छायावाद की कविता का एक अंश भर है। पंत, निराला, प्रसाद तथा महादेवी की बहुत सी रचनाओं में रहस्यवाद है किन्तु पूर्ण रचना रहस्यवादी नहीं है।

आधुनिक हिन्दी कविता में रहस्यवाद का उद्भव और विकास छायावाद युग में हुआ। छायावादी कविता के समापन के साथ ही रहस्यवादी कविताओं का सृजन बंद हो गया। सन् 1928 से 30 के आस-पास रहस्यवाद अपनी चरम अवस्था में था। आधुनिक युग की विशेषकर, छायावादी कविताएँ पढ़कर रहस्यवादी प्रवृत्तियों को समझना सरल हो जाता है।

रहस्यवाद की विशेषताएँ -

1. **अलौकिक सत्ता के प्रति प्रेम -** इस युग की कविताओं में अलौकिक सत्ता के प्रति जिज्ञासा, प्रेम व आकर्षण के भाव व्यक्त हुए हैं।
2. **परमात्मा से विरह-मिलन का भाव -** आत्मा को परमात्मा की विरहिणी मानते हुए उससे विरह व मिलन के भाव व्यक्त किए गए हैं।
3. **जिज्ञासा की भावना -** सृष्टि के समस्त क्रिया कलापों तथा अदृश्य ईश्वरीय सत्ता के प्रति जिज्ञासा के भाव प्रकट किए गए हैं।
4. **प्रतीकों का प्रयोग -** प्रतीकों के माध्यम से भावाभिव्यक्ति की गई है।

रहस्यवाद तथा छायावाद में अन्तर इस प्रकार है -

रहस्यवाद	छायावाद
इसमें चिंतन की प्रधानता है।	इसमें कल्पना की प्रधानता है।
ज्ञान व बुद्धितत्व की प्रधानता है।	भावना की प्रधानता है।
इसकी प्रकृति दार्शनिक है।	इसके मूल में प्रकृति है।

उत्तर छायावाद - इस काल में ''प्रेम और रोमांस'' की एक कविता धारा चली थी जिसके मुख्य कवि हरिवंशराय बच्चन, गोपाल सिंह नेपाली, रामेश्वर शुक्ल अंचल, हरिकृष्ण प्रेमी आदि हैं। इनमें एक सीमित क्षेत्र में अनुभूतियाँ व्यक्त की गई हैं। इस तरह की प्रवृत्ति ज्यादा नहीं चली। इन कवियों के काव्य में शृंगार, यौवन, तथा प्रकृति का चित्रण बहुतायत से मिलता है। इनके काव्य में छायावाद के विकास के लक्षण दिखाई देते हैं। जहाँ छायावादी काव्य धारा की त्रयी 'प्रसाद' पंत और 'निराला' के रूप में जानी जाती है, वहीं उत्तर छायावादी काव्य धारा की त्रयी बच्चन, 'सुमन' और 'अंचल' के रूप में जानी जाती है।

प्रगतिवाद –

प्रगतिवाद भौतिक जीवन से उदासीन आत्मनिर्भर, सूक्ष्म, अन्तर्मुखी प्रवृत्ति के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में, लोक के विरुद्ध स्थूल जगत की तार्किक प्रतिक्रिया है। प्रगतिवाद का प्रेरणा स्रोत मार्क्स का द्वंद्वात्मक भौतिकवाद है। सामाजिक चेतना और भावबोध काव्य का लक्ष्य है। प्रगतिवादी काव्य में समाजवादी विचारधारा का साम्यवादी स्वर महत्वपूर्ण रहा। राजनीति के क्षेत्र में जो साम्यवाद है साहित्य के क्षेत्र में वही प्रगतिवाद है। मार्क्सवादी विचारधारा का समर्थक प्रगतिवादी साहित्यकार आर्थिक विषमता को ही वर्तमान दु:ख एवं अशांति का कारण स्वीकार करता है। आर्थिक विषमता के फलस्वरूप समाज दो वर्गों में बँटा है– पूँजीपति–वर्ग अथवा शोषक वर्ग और दूसरा शोषित वर्ग या सर्वहारा वर्ग। प्रगतिवाद अर्थ, अवसर और संसाधनों के समान वितरण द्वारा ही समाज की उन्नति में विश्वास रखता है। सर्वहारा या सामान्य जन की प्राण प्रतिष्ठा के साथ श्रम की गरिमा को प्रतिष्ठित करना और साहित्य में प्रत्येक समाज के सुख–दुख का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करना उसका लक्ष्य है। यह काव्य–धारा, शोषक–वर्ग की भर्त्सना और शोषितों के प्रति सहानुभूति का भाव रखती है। उपयोगितावाद और भौतिक दर्शन से प्रभावित होने के कारण यह काव्य धारा नैतिकता एवं भावुकता की अपेक्षा बुद्धि और विवेक पर अधिक विश्वास करती है।

यह काव्यधारा कला की अपेक्षा 'जीवन' को, व्यक्ति की अपेक्षा समाज को और स्वानुभूति की अपेक्षा सर्वानुभूति को प्रधानता देती है।

प्रगतिवादी चेतना के बीज छायावाद में ही पल्लवित होने लगे थे किंतु तीसरे और चौथे दशक में प्रगतिशील आंदोलन ने काव्य को सामाजिकता की ओर उन्मुख किया। यथार्थ से सम्पृक्ति जन–जीवन से संलग्नता, मानवीय समस्याओं से सीधे साक्षात्कार, शोषितों के प्रति सहानुभूति प्रगतिवादी काव्य के मूल विषय बन गए। अभी तक किसान वर्ग के प्रति सहानुभूति–काव्य में स्थान पाती थी, प्रगतिवाद ने मजदूरों को भी इस कोटि में लाकर खड़ा कर दिया।

प्रगतिवादी काव्य की विशेषताएँ –

1. **शोषकों के प्रति विद्रोह और शोषितों से सहानुभूति** – प्रगतिवादी कवियों ने किसानों, मजदूरों पर किए जाने वाले पूँजीपतियों के अत्याचार के प्रति अपना विद्रोह व्यक्त किया है।
2. **आर्थिक व सामाजिक समानता पर बल** – इस युग के कवियों ने आर्थिक एवं सामाजिक समानता पर बल देते हुए निम्न वर्ग और उच्च वर्ग के अंतर को समाप्त करने पर बल दिया।
3. **नारी शोषण के विरुद्ध मुक्ति का स्वर** – प्रगतिवादी कवियों ने नारी को उपभोग की वस्तु नहीं समझा वरन उसे सम्मानजनक स्थान दिया है। नारी को शोषण से मुक्त कराने हेतु भी इन्होंने प्रयास किए हैं।
4. **ईश्वर के प्रति अनास्था** – इस काल के कवियों ने ईश्वर के प्रति अनास्था का भाव व्यक्त किया है। वे ईश्वरीय शक्ति की तुलना में मानवीय शक्ति को अधिक महत्व देते हैं।
5. **सामाजिक यथार्थ का चित्रण** – प्रगतिवादी कवियों ने व्यक्तिगत सुख–दु:ख के भावों की अपेक्षा समाज की गरीबी, भुखमरी, अकाल, बेरोज़गारी आदि सामाजिक समस्याओं की अभिव्यक्ति पर बल दिया।
6. **प्रतीकों का प्रयोग** – अपनी भावनाओं की स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए इस काल के कवियों ने प्रतीकों का सहारा लिया है।

7. **भाग्यवाद की अपेक्षा कर्मवाद की श्रेष्ठता पर बल** – प्रगतिवादी कवियों ने श्रम की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए भाग्यवाद को पूँजीवादी शोषण का हथियार बताया है।

प्रमुख प्रगतिवादी कवि	रचनाएँ
1. नागार्जुन	युगधारा, सतरंगे पंखों वाली, प्यासी पथराई आँखें।
2. केदारनाथ अग्रवाल	युग की गंगा, फूल नही रंग बोलते हैं, नींद के बादल।
3. शिवमंगल सिंह सुमन	हिल्लोल, जीवन के गान, प्रलय सृजन, विश्वास बढ़ता ही गया।
4. त्रिलोचन	धरती, मिट्टी की बारात, मैं उस जनपद का कवि हूँ।
5. रांगेय राघव	अजेय खण्डहर, मेधावी, पांचाली, राह के दीपक।
6. सुमित्रानंदन पंत	युगवाणी, ग्राम्या।
7. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला	कुकुरमुत्ता।

प्रयोगवाद –

हिन्दी में प्रयोगवाद का प्रारम्भ सन् 1943 में अज्ञेय के सम्पादन में प्रकाशित तारसप्तक से माना जा सकता है। इसकी भूमिका में अज्ञेय ने लिखा है – ''ये कवि नवीन राहों के अन्वेषी हैं।'' स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात अज्ञेय के सम्पादन में 'प्रतीक' मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। उसमें प्रयोगवाद का स्वरूप स्पष्ट हुआ। सन् 1951 में दूसरा तार सप्तक प्रकाशित हुआ और तत्पश्चात् तीसरा तार सप्तक।

जीवन और जगत के प्रति अनास्था प्रयोगवाद का एक आवश्यक तत्व है। साम्यवाद के प्रति भी अनास्था उत्पन्न कर देना उसका लक्ष्य है। वह कला को केवल कला के लिए, अपने अहं की अभिव्यक्ति के लिए ही मानता है। अहं का विसर्जन तथा साहित्य का सामाजीकरण इसका महत्वपूर्ण लक्षण था। इन कवियों की अनुभूति का केन्द्र इनका अहम् है। इनकी वाणी में 'मैं' का तीव्र विस्फोट है।

जीवन के प्रति विभिन्न कुंठाओं ने प्रयोगवादी कवि को शंकाकुल एवं भयाकुल बना दिया है। कवि बहुत कुछ कहना चाहता है। परन्तु कुछ कह नहीं पाता। जीवन की यह घुटन इस वर्ग की कविताओं में व्याप्त है। जीवन की निराशाओं से दबकर ये कवि या तो कल्पना लोक की बातें करते हैं अथवा नारी के प्रेम में मुँह छुपा लेना चाहते हैं। इनमें पलायन वृत्ति साफ देखी जा सकती है। इन कवियों ने नए उपमान, नया छंद विधान गढ़ने, नए शब्दों का प्रयोग करने तथा शब्दों में नए अर्थ भरने के प्रयोग भी किए हैं।

प्रयोगवादी काव्य की विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

1. **नवीन उपमानों का प्रयोग** – प्रयोगवादी कवियों ने पुराने एवं प्रचलित उपमानों के स्थान पर नवीन उपमानों का प्रयोग किया है। वे मानते हैं कि काव्य के पुराने उपमान अब बासी पड़ गए हैं।
2. **प्रेम भावनाओं का खुला चित्रण** – इन्होंने प्रेम भावनाओं का अत्यन्त खुला चित्रण कर उसमें अश्लीलता का समावेश कर दिया है।
3. **बुद्धिवाद की प्रधानता** – इस युग के कवियों ने बुद्धि तत्व को अधिक प्रधानता दी है इसके कारण काव्य में कहीं-कहीं दुरूहता आ गई है।

4. **निराशावाद की प्रधानता** – इस काल के कवियों ने मानव मन की निराशा, कुंठा व हताशा का यथातथ्य रूप में वर्णन किया है।

5. **लघुमानव वाद की प्रतिष्ठा** – इस काल की कविताओं में मानव से जुड़ी प्रत्येक वस्तु को प्रतिष्ठा प्रदान की गई है तथा उसे कविता का विषय बनाया गया है।

6. **अहं की प्रधानता** – फ्रायड के मनोविश्लेषण से प्रभावित ये कवि अपने अहं को अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं।

7. **रूढ़ियों के प्रति विद्रोह** – इस काल की कविताओं में रुढ़ियों के प्रति विद्रोह का स्वर मुखर हुआ है। इन कवियों ने रुढ़ि मुक्त नवीन समाज की स्थापना पर बल दिया है।

8. **मुक्त छन्दों का प्रयोग** – प्रयोगवादी कवियों ने अपनी कविताओं के लिए मुक्त छन्दों का चयन किया है।

7. **व्यंग्य की प्रधानता** – इस काल के कवियों ने व्यक्ति व समाज दोनों पर अपनी व्यंग्यात्मक लेखनी चलाई है।

प्रमुख प्रयोगवादी कवि	रचनाएँ
1. अज्ञेय	हरी घास पर क्षण भर, इत्यलम, इंद्रधनुष ये रौंदे हुए।
2. मुक्तिबोध	चाँद का मुँह टेढ़ा है, भूरी-भूरी खाक धूल।
3. धर्मवीर भारती	अंधायुग, कनुप्रिया, ठंडा लोहा।
4. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना	बाँस के पुल, एक सूनी नाव, काठ की घंटियाँ।
5. नरेश मेहता	संशय की एक रात, बन पाँखी।
6. गिरिजा कुमार माथुर	धूप के धान, शिला पंख चमकीले, नाश और निर्माण।
7. भारत भूषण अग्रवाल	ओ अप्रस्तुत मन।

नई कविता

प्रयोगवादी कविता का ही आगे का दौर नई कविता के रूप में उभरा है। वस्तुत: नई कविता की विषय वस्तु मात्र चमत्कार न होकर एक भोगा हुआ जीवन यथार्थ है। नई कविता परिस्थितियों की उपज है। नई कविता स्वतंत्रता के बाद लिखी गई वह कविता है जिसमें नवीन भावबोध, नए मूल्य तथा नया शिल्प विधान है। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद पहली बार मनुष्य की विवशता, असहायता, तथा निरूपायता सामने आई और उसने अस्तित्व का संकट अनुभव किया।

नई कविता में मानव का वह रूप जो दार्शनिक है, वादों से परे है, जो एकांत में प्रकट होता है, जो प्रत्येक स्थिति में जीता है, प्रतिष्ठित हुआ है। उसने लघु मानव को, उसके संघर्ष को बार-बार वर्ण्य बनाया है। नई कविता में दोनों परिवेशों को लेकर लिखने वाले कवि हैं। एक ओर ग्रामीण परिवेश, दूसरी ओर शहरी जिसमें कुंठा, घुटन, असमानता, कुरुपता आदि का वर्णन हुआ है। गिरिजा कुमार माथुर, धर्मवीर भारती, शमशेर बहादुर सिंह शहरी परिवेश के कवि हैं। दूसरी ओर ग्रामीण परिवेश भवानीप्रसाद मिश्र, केदारनाथ सिंह, तथा नागार्जुन आदि के काव्य में अभिव्यक्त है।

नई कविता को वस्तु की अपेक्षा शिल्प की नवीनता ने अधिक गंभीर चुनौती दी है। नए शिल्प अपनाना और परम्परागत शिल्प को तोड़ना दुष्कर कार्य था। अतएव कुछ कवियों को छोड़कर छोटी-मोटी कविताओं की प्रचुरता रही। और प्रभावशीलता की दृष्टि से ये छोटी-छोटी रचनाएँ भी बड़े-बड़े वृत्तान्तों से कही अधिक सफल बन पड़ी है।

घुटन, आक्रोश और नैराश्य में व्यंग्य का जन्म लेना स्वाभाविक था। इसलिए नई कविता में व्यंग्य की भी प्रधानता रही है।

नई कविता की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं -

1. **लघु मानव वाद की प्रतिष्ठा** - मानव जीवन को महत्वपूर्ण मानकर उसे अर्थपूर्ण दृष्टि प्रदान की गई।
2. **प्रयोगों में नवीनता** - नए-नए भावों को नए-नए शिल्प विधानों में प्रस्तुत किया गया है।
3. **क्षणवाद को महत्व** - जीवन के प्रत्येक क्षण को महत्वपूर्ण मानकर जीवन की एक-एक अनुभूति को कविता में स्थान प्रदान किया गया है।
4. **अनुभूतियों का वास्तविक चित्रण** - मानव व समाज दोनों की अनुभूतियों का सच्चाई के साथ चित्रण किया गया है।
5. **कुंठा, संत्रास, मृत्युबोध** - मानव मन में व्याप्त कुंठाओं का, जीवन के संत्रास एवं मृत्युबोध का मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रण इस काल की कविताओं की पहचान है।
6. **बिम्ब** - प्रयोगवादी कवियों ने नूतन बिम्बों की खोज की है।
7. **व्यंग्य प्रधान रचनाएँ** - इस काल में मानव जीवन की विसंगतियों, विकृतियों एवं अनैतिकतावादी मान्यताओं पर व्यंग्य रचनाएँ लिखी गई हैं।

नई कविता के प्रमुख कवि	रचनाएँ
1. भवानी प्रसाद मिश्र	सन्नाटा, गीत फरोश, चकित है दु:ख।
2. कुंवर नारायण	चक्रव्यूह, आमने-सामने, कोई दूसरा नहीं।
3. शमशेर बहादुर सिंह	काल तुझ से होड़ है मेरी, इतने पास अपने, बात बोलेगी हम नहीं।
4. जगदीश गुप्त	नाव के पाँव, शब्द दंश, बोधि वृक्ष, शम्बूक।
5. दुष्यन्त कुमार	सूर्य का स्वागत, आवाजों के घेरे, साये में धूप।
6. श्रीकान्त वर्मा	दिनारम्भ, भटका मेघ, माया दर्पण, मगध।
7. रघुवीर सहाय	हँसो-हँसो जल्दी हँसो, आत्म हत्या के विरुद्ध।
8. नरेश मेहता	वनपांखी सुनो, बोलने दो चीड़ को, उत्सव।

नवगीत

नई कविता जैसे-जैसे पुस्तकीय होती गई वैसे-वैसे उसकी पठनीयता क्षीण होती गई। पाठकों से, श्रोताओं से जैसे उसने मुख मोड़ लिया हो। कवियों के बीच, वह भी वैचारिक प्रतिबद्ध, खेमेबन्द अथवा चन्द श्रोताओं के बीच, सुनने और पढ़ने तक सीमित हो गई। मुहावरा दिया गया कि कविता के आस्वाद के लिए श्रोता को भी पात्र होना चाहिए। श्रोता को अपनी रुचि और समझ का विस्तार करना चाहिए।

कविता के प्रति बढ़ती हुई वितृष्णा को कवियों और गीतकारों ने भी अनुभव किया। उन्होंने गीतों के छन्द, लय-ताल और आंचलिकता के माधुर्य को बनाए रखने का निश्चय किया। समकालीन संवेदना शोषण और उत्पीड़न को

विषय बनाए रखने की प्रतिज्ञाबद्धता बनाए रखी। नई कविता की तरह उन्होंने परंपरा-विरोध को नहीं पाला, अपितु परंपरा में जो भी सुष्ठु और सौकर्य समझा, उसे स्वीकार किया। इसी को गीत के विकास के रूप में नवगीत की संज्ञा प्राप्त हुई जिसे नई कविता और गीत की संकर सृष्टि कहा जा सकता है। इस तरह नवगीत ने जहाँ नई-कविता को छिन्न-भिन्न होने से बचाया, वहीं गीत को प्रशंसात्मक और आत्ममुग्ध भावदशा से बाहर निकालकर समकालीन बनने के लिए समुन्नत किया।

इन गीतकारों में सोम ठाकुर, शम्भूनाथ सिंह, आनंद मिश्र आदि हैं जो नवगीत में छन्द-वैविध्य के साथ नई जमीन तोड़ने का प्रयास कर रहे हैं।

प्रमुख नवगीतकारों के नाम	रचनाएँ
1. वीरेन्द्र मिश्र	झुलसा है छाया नट धूप में, गीतम।
2. शम्भुनाथ सिंह	दर्द जहाँ नीला है, नवगीत दशक।
3. रमानाथ अवस्थी	बन्द न करना द्वार।
4. सोम ठाकुर	एक ऋचा पाटल की।

लोकगीत : जीवन की संवेदना

बोलियाँ, लोक संस्कृति और लोक-जीवन के अनेक पक्षों को अभिव्यक्त करने की क्षमताएँ रखती हैं। बोलियों में माटी की सौंधी गंध समाई रहती है। इनमें प्रकृति और मनुष्य के संवेदनों का अद्‌भुत समन्वय होता है। बोलियों में आंचलिकता का भाव इसी प्राकृतिक विभिन्नता के कारण आ जाता है। पहाड़ी क्षेत्र, समतली क्षेत्र, जंगली क्षेत्र का प्रभाव भी बोलियों की बनक-ठनक में अपनी अस्मिता व्यक्त करता है। मध्यप्रदेश के विभिन्न अंचलों में बोली जाने वाली बोलियों में बघेली, बुंदेली, मालवी, निमाड़ी के साथ गौड़ी, भीली आदि बोलियों का समावेश है, ये सभी आंचलिक बोलियाँ मध्यप्रदेश के लोक साहित्य को समृद्ध करती हैं।

क्षेत्र विशेष के आधार पर इन बोलियों की अपनी भौगोलिक और सांस्कृतिक सीमाएँ हैं। मध्यप्रदेश के प्राकृतिक सौन्दर्य, लोक संस्कृति और लोक-जीवन को लोक बोलियों में सरलता के साथ प्रकट किया गया है। लोक बोलियों का साहित्य, लोक गीतों और लोक-कथाओं के माध्यम से प्रकट होता है। लोक साहित्य की परंपरा मौखिक रूप से चलती है। इसमें लिखित साहित्य का अभाव है। लोक साहित्य में रचनाकार का नाम नहीं रहता है। लोक साहित्य एक तरह से समूह की रचना है। सतत रूप से लोक साहित्य की रचनात्मकता के लिए अनेक पीढ़ी के अनेक लोगों का योगदान रहता है। लोक साहित्य में सामूहिकता का भाव है। लोकगीत अधिकांशत: सामूहिक रूप में ही माने जाते हैं। लोक गीत लोक मानस के भावों और विचारों को प्रकट करने वाली सक्षम विधा है।

लोकगीत अपनी संगीतात्मकता के कारण अधिक प्रभावशाली हो उठते हैं। लोक गायिकी के अनेक रंग लोकगीतों की विभिन्न लयों को प्रकट करते हैं। लोकगीत और लोक नाट्यों का समन्वय दृश्य काव्य जैसा प्रभाव डालता है। लोक नृत्य और लोक नाट्यों में लोक गायकी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। अर्थात् लोक गीत स्वतंत्र रूप से भी गाए जाते हैं, और नृत्य और नाटकों के आयोजन में भी गाए जाते हैं।

लोक गीतों में जीवन का उल्लास, विषाद, भक्ति भावना, हास्य-व्यंग्य, प्रेम, प्रकृति, आक्रोश, आदि भावों का समावेश रहता है। आदिकालीन लोकगीतों का आकार छोटा था। अभी जंगली क्षेत्रों में जो लोकगीत गाए जाते हैं – उनका आकार छोटा होता है किंतु उनकी लय-जंगल जैसी फैली रहती है। जीवन के विकास के साथ ही लोक गीतों का कलेवर बढ़ता गया है। लोक गीतों में जहाँ पहले भावों का सघन दबाव सक्रिय था – वहाँ जीवन के विकसित संदर्भ बाद के लोकगीतों में आते गए हैं – वे चरित्र केन्द्रित हुए, उनमें घटनाओं का समावेश हुआ और उनके साथ कथानक जुड़ने लगा।

लोकगीत सामान्यत: विभिन्न सामाजिक पर्वों, उत्सवों, व्रतों, त्योहारों पर भी गाए जाते हैं। इन सबके आयोजन के निमित्त भिन्न-भिन्न तरह के लोकगीत हैं। सावन कजलियाँ, दीवाली, होली आदि अवसरों पर गाए जाने वाले लोकगीतों की लय और इनकी विषय वस्तु भिन्न-भिन्न होती है। व्रतों-उपवासों के आधार पर भी लोकगीतों में विभिन्न प्रकार के धार्मिक विश्वासों का समायोजन रहता है। लोकगीत सामाजिक परम्पराओं में भी अपनी बड़ी भूमिका निभाते हैं। जन्म-उत्सव के विभिन्न चरणों पर गाये जाने वाले लोक गीतों की लय बदलती रहती है। इसी तरह से विवाह में पानी भरने गई मटियाना, ऊबनी, भांवर, बेटी की विदा, पंगत आदि के अवसरों के भिन्न लोकगीत हैं। इन लोकगीतों में बदलते सामाजिक आयामों को भी आत्मसात किया गया है।

लोकगीतों का संबंध श्रम से भी है। लोक के विभिन्न व्यवसाय, कार्यों के लिए लोक गीतों की अपनी भूमिका निर्धारित है। कृषि प्रधान समूहों में खेत जोतते हुए, बोहनी करते-हुए, दाँभ चलाते हुए, उगाहनी करते हुए लोक गीत गाए जाते हैं। इस तरह गाए जाने वाले लोकगीतों में सृजन की प्रसन्नता तो समाहित रहती ही है – यह कर्म की उपलब्धि का उत्सव भाव भी समेटे रहते हैं। कार्यक्षेत्र के इन लोकगीतों को श्रम परिहरण के सिद्धांत से भी जोड़ा गया है। गाँव में कपड़ा बुनने, जैसे अवसरों पर गाए जाने वाले लोकगीतों का भी अपना संसार है। गाय – भैंस चराने वाले भी यत्र – तत्र लोकगीत गाते मिल जाते हैं। लोक गीत इस तरह एकांतिकता को भी तोड़ते हैं।

लोकगीतों में सामाजिक विकास का इतिहास छिपा हुआ है। आज जब लोक का विलोपन-सा हो रहा है, तब लोकगीतों को सुरक्षित रखना भी कठिन होता जा रहा है, किंतु ये हमारी धरोहर हैं। हमारी परंपराओं के पहरुए हैं। इसलिए इनका संरक्षण भी जरूरी है। यह तभी हो सकेगा जब हमारे घरों में लोक गीतों का सम्मान रहे उनकी गायिकी को सुरक्षित रखा जाए। लोकगीत की सरस लयें हमारे जीवन में सरसता जगाती हैं। लोकगीत हमें सामूहिक भाव से जोड़ता है। हम अंचलों की संस्कृति से लोकगीतों के माध्यम से ही परिचित होते हैं।

❋ ❋ ❋

भक्ति काव्य

मीराबाई

कवि परिचय :

मीरा बाई का जन्म सन् 1503 ई. (संवत् 1560) में मेड़तिया के राठौर रत्नसिंह के यहाँ हुआ माना जाता है। उदयपुर के महाराज भोजराज से उनका विवाह हुआ था। इनकी अनन्य कृष्णभक्ति और संत समागम से राणा परिवार रुष्ट हो गया था। कहते हैं कि एक बार मीरा को विष भी दिया गया किन्तु उन पर उसका असर नहीं हुआ।

मीराबाई के नाम से जिन कृतियों का उल्लेख मिलता है उनके नाम हैं - 'नरसी जी रो माहेरो', 'गीत गोविन्द की टीका', 'राग गोविन्द', 'सोरठ के पद', 'मीराबाई का मलार', 'गर्वागीत', 'राग विहाग' और फुटकर पद। भौतिक जीवन से निराश मीरा की एकान्त निष्ठा, 'गिरधर-गोपाल' में केन्द्रित है। 'मेरे तो गिरिधर-गोपाल दूसरो न कोई' कहकर मीरा ने कृष्ण के प्रति अपने समर्पण भाव को व्यक्त किया है। भक्ति का यह भी एक लक्षण है।

मीरा के पदों के वाचन और गायन से संकेत मिलता है कि मीरा की भक्ति भावना अन्तः करण से स्फूर्त है। उन्होंने मुक्त भाव से सभी भक्ति सम्प्रदायों से प्रभाव ग्रहण किया है। उनकी रचनाओं में माधुर्य समन्वित दाम्पत्य भाव है। मीरा का विरह पक्ष साहित्य की दृष्टि से मार्मिक है। उनके आराध्य तो सगुण साकार श्रीकृष्ण हैं। उनके अधिकांश पद राजस्थानी भाषा में लिखे गए हैं, साथ ही ब्रजभाषा, गुजराती और खड़ी बोली से प्रभावित हैं। उन्होंने प्रायः मात्रिक छन्दों का ही प्रयोग किया है। उनकी भक्ति में दैन्य तथा माधुर्य भाव की प्रधानता है। मीरा के पद गेय हैं। इनमें विभिन्न अलंकारों की छटा देखी जा सकती है।

भक्ति काल के स्वर्ण युग में मीरा के भक्ति भाव से सम्पन्न पद आज भी अलग ही जगमगाते दिखाई देते हैं।

केशवदास

कवि परिचय :

केशवदास के जन्मकाल के संबंध में विद्वान एकमत नहीं है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार इनका जन्मकाल सन् 1555 ई. (संवत् 1612) तथा मृत्यु सन् 1617 ई. (संवत 1674) माना गया है। इनका जन्म स्थान ओरछा मध्यप्रदेश है।

'रसिकप्रिया', 'कविप्रिया', 'रामचन्द्रिका', 'वीरचरित्र', 'विज्ञान गीता' और 'जहाँगीर जस चन्द्रिका' इनकी महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं। संस्कृत के 'प्रबोध चन्द्रोदय' नाटक के आधार पर 'विज्ञान गीता' निर्मित हुई है। 'जहाँगीर जसचन्द्रिका' में जहाँगीर के दरबार का वर्णन है।

नीति-निपुण, निर्भीक एवं स्पष्टवादी केशव की प्रतिभा बहुमुखी है। उनकी रचनाओं में उनके आचार्य, महाकवि और इतिहासकार का रूप दिखाई देता है। आचार्य का आसन ग्रहण करने पर इन्हें संस्कृत की शास्त्रीय पद्धति को हिन्दी में प्रचलित करने की चिन्ता हुई जो जीवन के अन्त तक बनी रही। इनके पहले भी रीतिग्रंथ लिखे गए किन्तु व्यवस्थित और सर्वांगीण ग्रंथ सबसे पहले इन्होंने ही प्रस्तुत किए। अनुप्रास, यमक और श्लेष अलंकारों के ये विशेष प्रेमी हैं। इनके श्लेष संस्कृत पदावली के हैं। अलंकार संबंधी इनकी कल्पना अद्भुत है।

इनका कवि रूप इनकी प्रबन्ध एवं मुक्तक दोनों प्रकार की रचनाओं में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। संवादों के उपयुक्त विधान का इनमें विशिष्ट गुण है। मानवीय मनोभावों की इन्होंने सुन्दर व्यंजना की है। संवादों में इनकी उक्तियाँ विशेष मार्मिक हैं तथापि प्रबन्ध के बीच अनावश्यक उपदेशात्मक प्रसंगों का नियोजन उसके वैशिष्ट्य में व्यवधान उपस्थित करता है। इनके प्रशस्ति काव्यों में इतिहास की सामग्री प्रचुर है। मध्यकाल में किसी के पाण्डित्य अथवा विद्वता की परख की कसौटी थी- केशव की कविता। केशव यदि 'रसिकप्रिया' जैसी भाषा लिखते रहते तो ये 'कठिन काव्य के प्रेत' कहलाने से बच जाते। कल्पना शक्ति संपन्न और काव्यभाषा में प्रवीण होने पर भी केशव पाण्डित्य प्रदर्शन का लोभ संवरण नहीं कर सके।

केन्द्रीय भाव -

आराध्य और आराधक के बीच संबंध की भावना को ही भक्ति के रूप में निरूपित किया गया है। इसमें आराध्य के प्रति आराधक की सेवा-भावना की प्रमुखता है। भक्ति के क्षेत्र में ईश्वर की महिमा का श्रवण, गायन और विविध प्रकार से उनकी सेवा करने का विधान है। इस विधान को नवधा भक्ति के नाम से जाना जाता है। भक्ति की सीमा में आराध्य और आराधक के बीच जो संबंध-भावना है; उसे दास्य, सख्य, आदि रूपों में भी व्यक्त किया गया है। तात्पर्य यह है कि ईश्वर से सेवक-भाव, सखा-भाव आदि के रूप में भी संबंध स्थापित किया जा सकता है।

हिन्दी साहित्य में पूर्व मध्यकाल को भक्तिकाल की संज्ञा प्रदान की गई है। इस युग में भक्ति का आधार ईश्वर के सगुण और निर्गुण दोनों रूप मिलते हैं; इन्हें प्राप्त करने के लिए प्रेम, सेवा तथा ज्ञान के मार्ग निर्धारित किए गए हैं। निर्गुण को आराध्य मानने वाले अधिकांश संत और भक्त कवियों ने उसे ज्ञान और प्रेम के माध्यम से अनुभव करने का संकेत दिया है। परन्तु 'सगुण-ब्रह्म' के रूप में राम और कृष्ण को केन्द्र बनाकर कविताओं का जो सृजन हुआ वह विशुद्ध प्रेम पर आश्रित है। भक्ति-काल में भक्ति का लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति के साथ-साथ समाज-कल्याण की भावना की परिपुष्टि भी रही है। 'सामाजिक-समरसता' की भूमिका निर्मित भी भक्तिकाल में ही हुई। जीवन में सदाचार उच्च मानवीय मूल्यों की सुरक्षा के लिए प्रतिबद्ध है।

भक्तिकाल की प्रमुख कवयित्री 'मीरा' ने श्रीकृष्ण को पति रूप में स्वीकार कर 'प्रेमभाव से समन्वित भक्ति' को ही अपनी साधना का आधार बनाया। 'प्रेम-भक्ति' का मूल आधार 'रति' है। रति की परिणति 'दाम्पत्य-भाव' में भी होती है। इस दाम्पत्य भाव के अन्तर्गत माधुर्य-उपासना की पीठिका निर्मित होती है। मीरा ने कृष्ण के प्रेम में डूबकर राजरानी पद का परित्याग कर दिया; वे साधु-संतों की संगत में रहकर बावली होकर कृष्ण के प्रति पूर्ण समर्पित हो गईं। संकलित पदों में मीरा का दृढ़-संकल्प, उनकी सत्संग की प्रबल-चाह, उनकी भक्ति-यात्रा में प्रस्तुत होने वाले विघ्न, उन पर सद्गुरु की असीम कृपा तथा कृष्ण-कृपा की एकनिष्ठ आकांक्षा का उल्लेख है।

भक्ति केवल भक्ति काल तक सीमित भाव नहीं है, यह काव्य के लिए एक शाश्वत-भाव भी है। इसलिए अन्य काल के कवियों में भी भक्ति-तत्व के दर्शन होते हैं जैसे-'केशवदास' - वे रीतिकाल के कवि माने जाते हैं; किन्तु उनकी कविता में भी भक्ति-भावना का निदर्शन है। प्रस्तुत काव्यांश में केशवदास द्वारा की गई देव-वन्दना परक पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं। 'भक्ति' के अन्तर्गत 'इष्ट' के वन्दन-अर्चन की प्रक्रिया है। वे गणेश, सरस्वती और श्रीराम की वन्दना करते हुए इनकी महिमा का वर्णन करते हैं। वे गणेश की कष्टनिवारक क्षमता, सरस्वती की उदारता और श्रीराम की मुक्ति-प्रदायिनी क्षमता का विशेष रूप से उल्लेख करते हैं।

केशवदास के छंदों में जहाँ भाषिक-स्तर पर शब्दालंकारों का सौन्दर्य बिखर रहा है; वहीं मीरा के पदों में सहज संवेदनशीलता का भाव लोक-जीवन के प्रतीकों में प्रकट होता है।

मीरा के पद

बाल्हा मैं बैरागिण हूँगी हो।
जो-जो भेष म्हाँरो साहिब रीझै, सोइ सोइ भेष धरूँगी, हो।
सील संतोष धरूँ घट भीतर, समता पकड़ रहूँगी, हो।

जाको नाम निरजण कहिये, ताको ध्यान धरूँगी, हो।
गुरू, ज्ञान रंगू, तन कपड़ा, मन मुद्रा पेरूँगी, हो।
प्रेम प्रीत सूँ हरि गुण गाऊँ, चरणन लिपट रहूँगी, हो।
यातन की मैं करूँ कीगरी; रसना राम रटूँगी, हो।
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, साधाँ संग रहूँगी, हो।।1।।

गली तो चारों बन्द हुई, मैं हरि से मिलूँ कैसे जाइ।
ऊँची नीची राह रपटीली, पाँव नहीं ठहराइ।
सोच सोच पग धरूँ जतन से, बार-बार डिग जाइ।
ऊँचा नीचा महल पिया का, हमसे चढ्या न जाइ।
पिया दूर पथ म्हाँरो झीणों, सूरत झकोला खाइ।
कोस-कोस पर पहरा बैठ्या, पैड़-पैड़ बटमार।
हे विधना कैसी रच दीन्हीं, दूर बस्यौ म्हाँरो गाँव।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, सतगुरु दई बताय।
जुगन जुगन से बिछड़ी मीरा, घर में लीन्ही लाय।।2।।

सखी री लाज बैरन भई।
श्री लाल गोपाल के संग, काहे नाहिं गई।।
कठिन क्रूर अक्रूर आयो, साजि रथ कहँ नई।
रथ चढ़ाय गोपाल लैगो, हाथ मीजत रही।।
कठिन छाती स्याम बिछुरत, बिरह में तन तई।
दासी मीरा लाल गिरधर, बिखर क्यों न गई।।3।।

भज मन चरण कँवल अविनासी।
जेताई दीसे धरण गगन बिच, तेताइ सब उठि जासी।।
कहा भयो तीरथ ब्रत कीन्हें, कहा लिए करवत कासी।
इस देही का गरब न करणा, माटी में मिल जासी।।
यो संसार चहर की बाजी, साँझ पड्यो उठ जासी।
कहा भयो है भगवा पहरयाँ, घर तज भये संन्यासी।।
जोगी होय जुगत नहि जाणी, उलटि जनम फिर आसी।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, काटो जनम की फाँसी।।4।।

– मीराबाई

वंदना

गणेश-वंदना

बालक मृणालनि ज्यों तोरि डारै सब काल,
कठिन कराल त्यों अकाल दीह दुख को।
बिपति हरत हठि पद्मिनी के पात सम,
पंक ज्यों पताल पेलि पठवै कलुष को।
दूरि कै कलंक-अक भव-सीस-ससि सम,
राखत है केशोदास दास के बपुष को।
साँकरे की साँकरनि सनमुख होत तोरै,
दसमुख मुख जोवैं गजमुख-मुख को।।1।।

सरस्वती-वंदना

बानी जगरानी की उदारता बखानी जाइ,
ऐसी मति उदित उदार कौन की भई।
देवता प्रसिद्ध सिद्ध रिषिराज तपबृद्ध,
कहि-कहि हारे सब कहि न काहू लई।
भावी भूत बर्तमान जगत बखानत है,
केशोदास क्योंहू ना बखानी काहू पै गई।
पति बर्ने चारमुख पूत बर्ने पाँचमुख,
नाती बर्ने षटमुख तदपि नई नई।।2।।

श्रीराम-वंदना

पूरण पुराण अरु पुरुष पुराण परिपूरण,
बतावैं न बतावैं और उक्ति को।
दरसन देत जिन्हैं दरसन समुझैं न,
नेति नेति कहैं बेद छाँड़ि भेद जुक्ति को।
जानि यह केशोदास अनुदिन राम राम,
रटत रहत न डरत पुनरुक्ति को।
रूप देहि अणिमाहि, गुन देई गरिमाहि,
भक्ति देई महिमाहि, नाम देई मुक्ति को।।3।।

– केशवदास

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. मीरा की भक्ति किस भाव की थी?
2. मीराबाई कैसा वेश रखना चाहती हैं?
3. ''राम-चंद्रिका'' के रचयिता कौन हैं?
4. गजमुख का मुख कौन देखता है?

लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. मीरा के अनुसार देह का गर्व क्यों नहीं करना चाहिए?
2. मीरा को हरि से मिलने में क्या-क्या कठिनाइयाँ हैं?
3. भगवान गणेश भक्तों की विपत्तियों को किस प्रकार हर लेते हैं?
4. माँ सरस्वती की वंदना कौन-कौन करता है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. ''मीरा का सम्पूर्ण काव्य भाव-विह्वलता के गुणों से पूरित है।'' सिद्ध कीजिए।
2. मीरा अपने मन को ईश्वर के चरण कमलों में ही क्यों लीन रखना चाहती हैं?
3. 'कठिन क्रूर अक्रूर आयो' पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।
4. 'बानी जगरानी की उदारता' का बखान करना क्यों संभव नहीं है?
5. श्रीराम वंदना में राम के नाम की क्या महिमा बताई गई है?
6. केशवदास की काव्यगत विशेषताएँ लिखिए।
7. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -

   (अ) बाल्हा मैं बैरागिण.....साधाँ संग रहूँगी हो।।

   (ब) भजमन चरण.....जनम की फाँसी।।

   (स) बालक मृणालनि.....गजमुख-मुख को।।

   (द) भावी भूत वर्तमान..... नई-नई।।

काव्य सौन्दर्य -

1. **निम्नलिखित शब्दों के हिन्दी मानक रूप लिखिए-**

   सील, पग, जतन, जुग, पात, सीस, ससि, दरसन, पूत, गुन

2. **'म्हारों', 'सूँ' आदि राजस्थानी शब्दों का प्रयोग मीरा के पदों में हुआ है। ऐसे ही अन्य शब्दों का चयन कर उनका अर्थ लिखिए।**
3. **निम्नलिखित शब्दों के पर्यायवाची शब्द लिखिए-**

   रसना, पथ, गगन, देह, जगत, मुख, भव

4. निम्नलिखित पंक्तियों में अलंकार पहचान कर लिखिए-

(क) 'सोच सोच पग धरुँ जतन से, बार-बार डिग जाइ।'

(ख) 'भज मन चरण कँवल अविनासी।'

(ग) 'बालक मृणालनि ज्यों तोरि डारै सब काल'

(घ) 'बिपति हरत हठि पद्मिनी के पात सम।'

(ङ) 'पूरण पुराण अरु पुरुष पुराण परिपूरण।'

(च) 'दरसन देत जिन्हे दरसन समुझै न।'

ध्यान दीजिए -

भज मन चरण कँवल अविनासी।
जेताई दीसे धरण गगन बिच, तेताइ सब उठि जासी।

उपर्युक्त उदाहरण को ध्यान से पढ़िए। इन पंक्तियों को पढ़कर मन में भक्ति भाव जाग्रत होते हैं एवं अलौकिक आनंद की अनुभूति होती है। ये मन के भाव ही रस कहलाते हैं। ''वाक्यं रसात्मकं काव्यं'' रस से युक्त वाक्य ही काव्य हैं। रस को काव्य की आत्मा कहा जाता है।

5. रस की परिभाषा दीजिए।

समझिए-

काव्य शास्त्रियों के अनुसार रस के चार अंग होते हैं। ''विभावानुभावव्यभिचारीसंयोगाद्रस निष्पत्ति:'' अर्थात् विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से रस निष्पत्ति होती है।

रस के चार अवयव हैं-

1. **स्थायी भाव-** सहृदय के हृदय में जो भाव स्थायी रूप से निवास करते हैं, स्थायी भाव कहलाते हैं। इन्हें अनुकूल या प्रतिकूल किसी प्रकार के भाव दबा नहीं पाते। स्थायी भाव नौ हैं। इन्हीं के आधार पर नौ रस माने गए हैं। प्रत्येक रस का एक स्थायी भाव नियत होता है। रति, हास, शोक, उत्साह, क्रोध, भय, जुगुप्सा (घृणा), विस्मय, शम (निर्वेद) स्थायी भाव हैं। इसके अतिरिक्त वात्सल रस माना गया हैं। इसका स्थायी भाव वत्सल है।

2. **संचारी भाव-** स्थायी भाव को पुष्ट करने के लिए जो भाव उत्पन्न होकर पुन: लुप्त हो जाते हैं उन्हें संचारी भाव कहते हैं। इनकी संख्या 33 मानी गई है। निर्वेद, शंका, ग्लानि, हर्ष, आवेग आदि प्रमुख संचारी भाव हैं।

3. **विभाव -** स्थायी भावों को जाग्रत करने वाले कारक विभाव कहलाते हैं। इनके दो भेद हैं- आलम्बन और उद्दीपन।

   आलम्बन- जिसके प्रति स्थायी भाव उत्पन्न हो, वह आलम्बन कहलाता है।

   स्थायी भावों को बढ़ाने या उद्दीप्त करने वाले भाव उद्दीपन कहलाते हैं। आलम्बन के भी दो भेद हैं-

   आश्रय- जिस व्यक्ति के मन में भाव जाग्रत हों।

   विषय- जिस वस्तु या व्यक्ति के प्रति भाव उत्पन्न हों।

4. **अनुभाव-** आश्रय की बाह्य शारीरिक चेष्टाएँ अनुभाव कहलाती हैं।

और भी समझिए-

हृदय में स्थित स्थायी भाव का जब अनुभाव, विभाव और संचारी भाव से संयोग होता है तब रस की निष्पत्ति होती है।

''राम को रूप निहारति जानकी,
कंगन के नग की परिछांही।
याते सबै सुधि भूलि गईं,
कर टेक रहीं पल टारत नाहीं''

उपर्युक्त उदाहरण में रस के चारों अंगों की निष्पत्ति इस प्रकार हुई है-

स्थायी भाव - रति

विभाव - क. आलंबन - जानकी (आश्रय) राम (विषय)

ख. उद्दीपन - कंगन के नग में (प्रिय का) प्रतिबिंब

अनुभाव- कर टेकना, पलक न गिरना।

संचारी भाव - हर्ष, जड़ता, उन्माद।

6. 'केशवदास' की संकलित वंदनाओं में कौन सा रस है?

7. निम्नलिखित पंक्तियों में निहित रस तथा उसके विभिन्न अंगों को समझाइए -

बानी जगरानी की उदारता बखानी जाइ,
ऐसी मति उदित उदार कौन की भई।
देवता प्रसिद्ध सिद्ध रिषिराज तपबृद्ध,
कहि-कहि हारे सब कहि न काहू लई।

योग्यता विस्तार

1. भक्तिकाल के प्रमुख संत कवियों की एक फोटो-एलबम तैयार कीजिए।
2. मीरा तथा केशव की कर्मभूमि की यात्रा कीजिए। अपने गुरूजनों से इन स्थानों का महत्व जानिए।
3. अपने क्षेत्र में बोली जाने वाली बोलियों के भक्ति-गीतों का संकलन कीजिए।

शब्दार्थ

मीरा के पद

बाल्हा = स्वामी, *म्हारे* = मेरे, *साहिब* = आराध्य (कृष्ण), *निरजण* = निरंजन
रसना = जिह्वा, *कीगरी* = तंतुवाद्य

वंदना

मृणाल = कमल की नाल, *कराल* = भयानक, विकराल, *पंक* = कीचड़, *पेलि* = हठपूर्वक
वपुष = देह, *सनमुख* = सामने, *दशमुख* = रावण, *गजमुख* = गणेश
तपबृद्ध = श्रेष्ठ तपस्वी, *अनुदिन* = प्रतिदिन, *अणिमाहि* = अणिमा को (सूक्ष्मता)
गरिमाहि = गरिमा को, *महिमाहि* = महिमा को

❋ ❋ ❋

वात्सल्य और स्नेह

सूरदास

कवि परिचय :

सूरदास विट्ठलनाथ द्वारा स्थापित अष्टछाप के अग्रणी भक्त कवि हैं। सूरदास का जन्म संवत् 1535 (सन् 1478) में दिल्ली के पास सीही नामक गाँव में हुआ था। उनके सम्बन्ध में कहा जाता है कि वे जन्मान्ध थे।

सूरदास की सर्वसम्मत प्रामाणिक रचना 'सूरसागर' है। 'सूरसागर' के अतिरिक्त 'साहित्य लहरी' भी उनकी प्रमाणिक रचना मानी जाती हैं।

सूरदास कृष्ण भक्ति शाखा के प्रमुख कवि हैं। उन्होंने कृष्ण की बाल लीलाओं का विस्तृत वर्णन किया है। उनका हृदय गोप-बालकों की भाँति सरल और निष्पाप, ब्रज-गोपियों की भाँति सहज संवेदनशील, प्रेम प्रवण और माधुर्यपूर्ण, नन्द और यशोदा की भाँति सरल, विश्वासी, स्नेह कातर और आत्म बलिदान की भावना से ओतप्रोत है। राधा और गोपियों के प्रेम प्रसंग, रास लीला, मथुरा गमन, कंस वध, ब्रज विरह और उपालंभ इनके प्रमुख वर्ण्य विषय हैं। उनकी प्रेम भक्ति के सख्य, वात्सल्य और माधुर्य भावों का चित्रण जिन संचारी भावों में हुआ है, उनके अन्तराल में उनकी वैराग्यवृत्ति और दीनतापूर्ण आत्म निवेदनात्मक भक्ति भावना की अन्तर्धारा प्रवाहमान है।

उनकी ब्रजभाषा में साहित्यिक माधुर्य है। अलंकारों का सहज स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। करुण व हास का दुर्लभ एक रस रूप सूरकाव्य में सुलभ है। यही कारण है कि उनकी गोपियाँ विरह की हृदय-विदारक वेदना को भी हास-परिहास में दबा ले जाती है। वे मानवीय मनोभावों और चित्तवृत्तियों को लोकोत्तर स्वरूप प्रदान कर देते हैं और यही सूरकाव्य लोक और परलोक को एक साथ प्रतिबिंबित करता है।

सूरदास गीतिकाव्य परम्परा के सशक्त गीतकार हैं। अपनी काव्यकला और साहित्यिक प्रतिभा के बल पर वे हिन्दी साहित्य जगत के सूर्य माने जाते हैं।

कवि परिचय :

गोपालसिंह नेपाली

मंचों को राष्ट्रीय भावों के उद्घोष से गुंजायमान करने वाले गोपालसिंह नेपाली का जन्म बेतिया (बिहार) में 11 अगस्त सन् 1903 ई. को हुआ। इनके पिता रायबहादुर गोरखा रायफल में सैनिक थे। देश-प्रेम और मानवता की भावना इन्हें विरासत में प्राप्त थी। 14 वर्ष की आयु से ही वे कविता लिखने लगे थे। नेपाली ने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशन और कवि-सम्मेलनों में अपने गीतों से विशिष्ट पहचान बनाई।

नेपाली जी रतलाम टाइम्स (मालवा), चित्रपट (दिल्ली), सुधा (लखनऊ) और योगी (साप्ताहिक, पटना) के सम्पादन विभाग में रहे। चलचित्रों के गीतकार के रूप में भी आप प्रसिद्ध हुए। उन्होंने 50 से अधिक फिल्मों के गीत लिखे। 1962 के चीनी आक्रमण के समय उन्होंने देश में घूम-घूमकर गीतों का गायन किया और देशभक्ति की भावना जाग्रत की।

'उमंगें', 'पंछी', 'रागिनी', 'नीलिमा', 'पंचमी', 'सावन', 'कल्पना', 'आँचल', 'रिमझिम', 'नवीन', 'हिन्दुस्तान', 'हिमालय पुकार रहा है' आदि इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। इन रचनाओं में नेपाली जी प्रकृति के रम्य रूप और मनोहर छवियों को प्रस्तुत करते हैं जिसमें एक ओर प्रणय और सौन्दर्य प्रकट है तो दूसरी ओर राष्ट्र प्रेम उत्कट है। शोषित के प्रति सहानुभूति और स्थितियों से जूझने का सन्देश उनमें मुखर है। इनके प्रणय गीत माधुर्य से ओतप्रोत और प्रयाण-गीत ऊर्जावान हैं। भाई-बहन के प्रेम को आधार बनाकर भी उन्होंने काव्य रचना की है।

इनकी भाषा साहित्यिक के साथ-साथ व्यावहारिक है। यही कारण है कि वह जनसामान्य के निकट सरल सहज और संप्रेषणीय है। नेपाली जी की गणना विशिष्ट राष्ट्रीय कवियों में की जाती है। उन्होंने मानवीय रिश्तों की डोर को आधार मानकर भी काव्य रचना की है। गीतधारा को आगे बढ़ाने में उन्होंने महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

केन्द्रीय भाव -

प्रेम के अनेक रूपों में से वात्सल्य प्रेम का वह प्रकार है जिससे प्रेम का निश्छल, उदार और शिशु सुलभ स्वभाव प्राप्त होता है। यह भाव शिशु के मोहक स्वरूप, उसकी आकर्षक मुद्राओं और उसके अबोध व्यवहारों के प्रदर्शन से दर्शक के हृदय में प्रस्फुटित होता है। मातृत्व परक स्नेह भाव की केन्द्रीयता वात्सल्य में प्रकट होती है। वात्सल्य का उद्रेक वत्सलता से ही फूटता है। वत्सलता के अंतर्गत बाल क्रीड़ा, बाल मनोविनोद और बाल कुतूहल जैसे भाव तो निहित हैं ही; इसमें बाल सुलभता के संरक्षण और उसके पोषण के भाव-संसार की व्यापकता भी समाहित है। यह भाव माता-पिता के आनंद का वर्द्धक है।

हिन्दी साहित्य में वात्सल्य केन्द्रित रचनाओं की स्वल्पता है, किन्तु जितनी भी रचनाएँ प्राप्त होती हैं, वे वत्सलता के प्रभावी स्वरूप को प्रस्तुत करती हैं। सूरदास ने शिशु सुलभ मुद्राओं, क्रीड़ाओं और भंगिमाओं को तो अपने काव्य में प्रस्तुत किया ही है- शिशु के स्वभावगत सौन्दर्य को भी उन्होंने अपनी उदात्त और आकर्षक छबियों में प्रकट किया है। उनके द्वारा वर्णित वत्सल मात्र भक्तिकाल की धरोहर नहीं है; वह शाश्वत भाव संपदा है। प्रस्तुत पदों में सूरदास ने शिशु कृष्ण की सहज भाव क्षमता का उद्घाटन किया है। शिशु असंभव को संभव करने की भी उतावली पालता है। वह सहज विश्वासी होता है। शिशु कृष्ण से यदि माँ ने कह दिया है कि गाय का दूध पीने से चोटी बढ़ती है तो शिशु कृष्ण खूब दूध पीते हैं और रोज-रोज माँ से पूछते हैं कि उसकी चोटी क्यों नहीं बढ़ रही है? शिशु की अधीरता का यह मनोहारी प्रसंग है। बच्चों में पारस्परिक चिढ़ाने का भाव रहता है। कृष्ण बलराम की शिकायत अपनी माँ से इसी रूप में करते हैं। बलराम उन्हें उलटा-सीधा कहकर चिढ़ाते रहते हैं। शिशु सुलभ स्वभाव में मिट्टी खाने की प्रवृत्ति भी समाहित है। सूरदास ने इस तथ्य का मनोरंजक वर्णन अपने पदों में किया है। सूरदास की भाषा का प्रवाह और उनकी चमत्कृत कर देने वाली शब्द संयोजना इन पदों में उपलब्ध होती है।

गोपाल सिंह नेपाली ने राष्ट्रीय चेतना के साथ-साथ मानवीय जीवन की ऊष्मापूर्ण अनुभूतियों का प्रभावशाली वर्णन अपनी कविताओं में किया है। प्रस्तुत कविता में कवि ने भाई-बहिन के बीच के प्रेम को राष्ट्रीय प्रेम के परिवेश में अभिव्यक्त किया है। इस कविता में भाई, बहिन को संबोधित कर रहा है। वह बहिन से कहता है कि हम दोनों को राष्ट्र रक्षा के निमित्त सजग और सक्रिय होना है। अनेक प्रतीकों के माध्यम से कवि ने अपने इस कथ्य को प्रकट किया है। बहिन की बुद्धि और भाई की क्रियाशीलता मिलकर ही जीवन को और राष्ट्र को आनंदमय बना सकेगी। दोनों मिलकर आजादी के गीत गाकर ही मातृभूमि के प्रति अपने कर्त्तव्य को पूर्ण कर सकते हैं। इस कविता में मनुष्य के संबंधों के भीतर के स्नेह-भाव को तो व्यक्त किया ही गया है- इसे मातृभूमि के प्रेम से जोड़कर और उदात्त बना दिया गया है। कविता में दिए गए बिम्ब और प्रतीक एकदम मौलिक और नवीन हैं।

सूर के बालकृष्ण

मैया मैं नाहीं दधि खायो।

ख्याल परे ये सखा सबै मिलि, मेरे मुख लपटायो।।

देखि तुही सींके पर भाजन, ऊँचे धर लटकायो।

तुही निरखि नान्हे कर अपने, मैं कैसे करि पायो।।
मुख दधि पोंछि कहत नंदनंदन, दोना पीठ दुरायो।
डारि साँट मुसुकाई तबहि, गहि सुत को कंठ लगायो।।
बालविनोद मोद मन मोह्यो, भक्ति प्रताप दिखायो।
सूरदास प्रभु जसुमति के सुख, शिव विरँचि बौरायो।।1॥

मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी।
किती बार मोहि दूध पिअत भई, यह अजहूँ है छोटी।।
तू जो कहति बल की बेनी, ज्यौं, ह्वै है लाँबी मोटी।
काढ़त गुहत न्हवावत ओछत, नागिनि सी भुइँ लोटी।।
काचो दूध पिआवत पचि-पचि, देत न माखन रोटी।
सूर श्याम चिरजीवौ दोऊ भैया, हरि हलधर की जोटी।।2 ॥

मैया, मोहिं दाऊ बहुत खिझायो।
मोसों कहत मोल को लीनो, तोहि जसुमति कब जायो।।
कहा कहौं यहि रिसके मारे, खेलन हौं नहिं जात।
पुनि पुनि कहत कौन है माता, को है तुमरो तात।।
गोरे नंद जसोदा गोरी, तुम कत स्याम सरीर।
चुटकी दै दै हँसत ग्वाल सब, सिखै देत बलबीर।।
तू मोही को मारन सीखी, दाऊ कबहुँ न खीझै।
मोहन को मुख रिस समेत लखि, जसुमति सुनि-सुनि रीझै।।
सुनहु कान्ह बलभद्र चबाई, जनमत ही को धूत।
सूर श्याम मो गोधन की सौं, हौं माता तू- पूत।।3 ॥

मो देखत जसुमति तेरे ढोटा, अबहिं माटी खाई।
यह सुनिकै रिस करि उठि धाई, बांह पकरि लै आई।।
इन कर सों भज गहि गाढ़े, करि इक कर लीने सांटी।
मारति हौं तोहिं अबहिं कन्हैया, वेग न उगिलौ माटी।।
ब्रज लरिका सब तेरे आगे, झूठी कहत बनाई।
मेरे कहे नहीं तू मानति, दिखरावौं मुख बाई।।4॥

- सूरदास

भाई-बहन

तू चिनगारी बनकर उड़ री, जाग-जाग मैं ज्वाल बनूँ,
तू बन जा हहराती गंगा, मैं झेलम बेहाल बनूँ;
आज बसन्ती चोला तेरा, मैं भी सज लूँ लाल बनूँ;
तू भगिनी बन क्रान्ति कराली, मैं भाई विकराल बनूँ;
यहाँ न कोई राधारानी, वृन्दावन, वंशीवाला;
तू आँगन की ज्योति बहन री, मैं घर का पहरे वाला।

बहन प्रेम का पुतला हूँ मैं, तू ममता की गोद बनी;
मेरा जीवन क्रीड़ा-कौतुक तू प्रत्यक्ष प्रमोद भरी;
मैं भाई फूलों में भूला, मेरी बहन विनोद बनी;
भाई की गति, मति भगिनी की दोनों मंगल-मोद बनी
यह अपराध कलंक सुशीले, सारे फूल जला देना।
जननी की जंजीर बज रही, चल तबियत बहला देना।

भाई एक लहर बन आया, बहन नदी की धारा है;
संगम है, गंगा उमड़ी है, डूबा कूल-किनारा है;
यह उन्माद, बहन को अपना भाई एक सहारा है;
यह अलमस्ती, एक बहन ही भाई का ध्रुवतारा है;
पागल घड़ी, बहन-भाई है, वह आजाद तराना है।
मुसीबतों से बलिदानों से पत्थर को समझाना है।

- गोपालसिंह 'नेपाली'

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. कृष्ण ने दही का दोना कहाँ छिपा लिया ?
2. दूध पीने से चोटी बढ़ती है, यह सुझाव कृष्ण को किसने दिया था?
3. सूरदास किस भाषा के कवि है ?

4. 'मोसों कहत मोल को लीनो' यह कथन किसने कहा है?

5. ''घर का पहरे वाला'' से कवि का क्या आशय है?

6. 'ममता की गोद' किसे कहा गया है?

लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. अपने को निर्दोष सिद्ध करने के लिए कृष्ण ने यशोदा को क्या-क्या तर्क दिए?

2. 'गोरे नंद जसोदा गोरी, तुम कत स्याम सरीर' यह पंक्ति किसने, किससे और क्यों कही?

3. मुँह से मिट्टी निकालने के लिए यशोदा ने कौन-सा उपाय किया?

4. 'मेरा जीवन क्रीड़ा-कौतुक तू प्रत्यक्ष प्रमोद भरी' से कवि का क्या आशय है?

5. बहन को भाई का 'ध्रुव तारा' क्यों कहा गया है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. कृष्ण माता यशोदा से बलदाऊ की क्या-क्या शिकायतें करते हैं?

2. 'सूर वात्सल्य के चितेरे हैं', इस कथन पर अपने विचार व्यक्त कीजिए ।

3. बहन को 'चिनगारी' तथा भाई को 'ज्वाला' बताने के पीछे कवि का क्या आशय है?

4. कवि ने भाई-बहन के स्नेह को किन-किन प्रतीकों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है?

5. 'भाई-बहन' कविता के माध्यम से कवि क्या संदेश देना चाहता है?

6. **सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए -**

   (अ) मैया मैं नाहीं..... शिव विरंचि बौरायो।।

   (ब) मैया कबहिं बढ़ैगी..... हरि हलधर की जोटी।।

   (स) भाई एक लहर..... भाई का ध्रुव तारा है।

काव्य सौन्दर्य -

1. **निम्नलिखित शब्दों के मानक रूप लिखिए-**

   किती, दोऊ , जायो, सिखै, सौं, हौं, लरिका, काचो

2. **निम्नलिखित पंक्तियों में अलंकार पहचान कर लिखिए-**

   (अ) काढ़त गुहत न्हवावत ओछत, नागिन सी भुईं लोटी।

   (ब) मेरा जीवन क्रीड़ा-कौतुक तू प्रत्यक्ष प्रमोद भरी।

   (स) काचो दूध पिआवत पचि-पचि, देत न माखन रोटी।

3. **निम्नलिखित शब्दों में से तत्सम और तद्भव शब्द छाँटकर लिखिए-**

ज्योति, उन्माद, बहन, कलंक, जननी, माटी, मैया, पूत, तात, पत्थर

ध्यान दीजिए :-

''मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी।
किती बार मोहि दूध पिअत भई, यह अजहूँ है छोटी।।

तू जो कहति बल की बेनी ज्यौं, ह्वै है लाँबी मोटी।
काढ़त गुहत न्हवावत ओछत, नागिनि-सी भुइँ लोटी।।''

इन काव्य पंक्तियों को पढ़कर बालसुलभ क्रीड़ाएँ तथा वात्सल्य भाव की अनुभूति होती है।

जिन पंक्तियों को पढ़कर मन में ममता के भाव, वात्सल्य के भाव आएँ वहाँ वात्सल्य रस होता है। इसका स्थायी भाव वत्सल है।

इन पंक्तियों में आलम्बन विभाव कृष्ण हैं तथा कृष्ण की बाल-लीलाएँ व बाल-चेष्टाएँ उद्दीपन विभाव है।

और भी समझिए-

सहृदय के हृदय में विभाव, अनुभाव और संचारी भावों से पुष्ट हुआ 'रति' स्थायी भाव जब अपनी परिपक्वता को प्राप्त कर लेता है तब श्रृंगार रस की उत्पत्ति होती है। इसे 'रसराज' भी कहा जाता है। इसके दो भेद हैं- संयोग श्रृंगार और वियोग श्रृंगार।

उनका यह कुंज-कुटीर, वहीं झरना उडु, अंश अबीर जहाँ,
अलि कोकिल, कीर शिखी सब हैं, सुन चातक की रट पीव कहाँ?
अब भी सब साज-समान वही, तब भी सब आज अनाथ यहाँ,
सखि जा पहुँचे सुधि-संग वही, यह अंध सुगंध समीर वहाँ।

इस पद में -

स्थायी भाव – रति

विभाव क – आलंबन – यशोधरा (आश्रय) सिद्धार्थ (विषय)

ख – उद्दीपन – कुंज-कुटीर, कोकिल, भौंरे व पपीहे की ध्वनि

अनुभाव - विषाद भरे स्वर में कथन

संचारी भाव - स्मृति, मोह, विषाद

4. गोद राखि चचुकारि दुलारति पुन पालति हलरावति।
आँचर ढाँकि बदन विधु सुंदर थन पय पान करावति।।

उपर्युक्त पंक्तियों में प्रयुक्त रस बताइए।

5. इस पाठ में से पुनरुक्ति प्रकाश और अनुप्रास अलंकार के उदाहरण छाँटकर लिखिए।

योग्यता विस्तार

1. वात्सल्य रस से संबंधित अन्य कवियों की रचनाएँ पढ़िए एवं सूर के वात्सल्य वर्णन से उनकी तुलना कीजिए।
2. 'रक्षाबंधन' त्योहार के परिप्रेक्ष्य में 'भाई-बहन' कविता का महत्व बताइए।
3. किसी क्षेत्रीय बोली में 'भाई-बहन' के स्नेह पर आधारित लोकगीतों को कंठस्थ कीजिए एवं बालसभा में उनका गायन कीजिए।

शब्दार्थ

सूर के बालकृष्ण

ख्यालपरे = याद आया
भाजन = बर्तन, पात्र
बेनी = चोटी
भुइँ = भूमि, जमीन
जायो = पैदा किया
तात = पिता
चबाई = निन्दक, चुगलखोर, झूठा
ढोटा = पुत्र
गहि गाढ़े = जोर से पकड़कर
सांटी = पीटने की डंडी
मुख बाई = मुख फैलाकर,

भाई-बहन

हहराती गंगा = कलकल ध्वनि करती गंगा
चोला = वेश
भगिनी = बहन
विकराल = भयानक
विनोद = मनोरंजन
तराना = ताल स्वर
प्रमोद = आनंद

❋ ❋ ❋

प्रेम और सौन्दर्य

कवि परिचय :

घनानन्द

घनानन्द हिन्दी की रीतिमुक्त काव्यधारा के कवि हैं। इनका जन्म काल 1658 ई. और मृत्यु 1739 ई. में मानी जाती है। हिन्दी में घनानन्द और आनन्दधन नाम के दोनों रचनाकारों को पहले एक ही माना जाता था। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने दोनों कवियों की भिन्नता स्पष्ट कर दी।

घनानन्द की रचनाएँ अधिकतर मुक्तक रूप में प्राप्त होती हैं। इनकी कतिपय रचनाओं का सर्वप्रथम प्रकाशन भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'सुन्दरी तिलक' पत्रिका में कराया था। सन् 1870 में उन्होंने 'सुजान शतक' नाम से इनके 119 कवित्त प्रकाशित किए। इसके पश्चात् जगन्नाथ दास रत्नाकर ने सन् 1897 में इनकी 'वियोग बेलि' और 'विरह-लीला' नागरी प्रचारणी सभा द्वारा प्रकाशित की। 'घनानन्द कवित्त', 'कवित्त संग्रह', 'सुजान-विनोद', 'सुजान हित', 'वियोग-बेलि', 'आनन्दघन जू' , 'इश्क लता', 'जमुनाजल' और 'वृन्दावन सत' आदि इनकी रचनाएँ हैं।

घनानन्द ने सुजान का अपने पदों में इतनी तन्मयता से उल्लेख किया है कि उसका आध्यात्मीकरण हो गया है। सुजान का उनकी प्रेयसी होना ही अधिक सिद्ध होता है। सुजान को शृंगार पक्ष में नायक और भक्ति पक्ष में कृष्ण मान लेना उचित होगा।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने घनानन्द को रीतिमुक्त काव्यधारा का श्रेष्ठ कवि कहा है। घनानन्द का विरह-वर्णन सूरदास के भ्रमरगीत के समकक्ष है। उनकी ब्रजभाषा सजीव, लाक्षणिक, व्यंजना पूर्ण तथा व्याकरण सम्मत है। उनकी भाषा फारसी काव्य से अनुप्राणित होते हुए भी मौलिक है। कवि ध्वन्यात्मक शब्दों के प्रयोग में पटु है। इनकी रचनाओं में अनुप्रास एवं रूपक का शोभन प्रयोग हुआ है। इस प्रकार भाषा, छन्द, शैली, अलंकार और उसके अनुप्रयोग की दृष्टि से घनानन्द की रचनाएँ अत्यन्त सरस एवं प्रौढ़ हैं।

रत्नाकर

कवि परिचय :

रत्नाकर का जन्म 1866 ई. में हुआ था। उन्होंने क्वीन्स कॉलेज, बनारस से 1891 में बी.ए. पास किया। एल.एल.बी. और एम.ए. (फारसी) का अध्ययन माता की मृत्यु के कारण पूरा नहीं कर पाये। 21 जून सन् 1932 को हरिद्वार में आपका देहावसान हुआ।

'हिंडोला', 'कलकाशी', 'शृंगार लहरी', 'गंगा तथा विष्णु लहरी', 'रत्नाष्टक', 'वीराष्टक', 'गंगावतरण', 'उद्धवशतक', आदि इनकी कृतियाँ हैं। आपके द्वारा पोप के 'एसेज़ आन क्रिटिसिज्म' का हिन्दी अनुवाद किया गया जो 'समालोचनादर्श' नाम से प्रकाशित हुआ।

रत्नाकर द्वारा लिखे गए साहित्यिक ऐतिहासिक लेखों, मौलिक कृतियों की रचना और महत्वपूर्ण ग्रंथों के संपादन से उनके गंभीर अध्ययन, मौलिक प्रतिभा और सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि का पता चलता है। उन्होंने 'साहित्य सुधा निधि' तथा 'सरस्वती' पत्रिकाओं का संपादन किया। रसिक मण्डल, प्रयाग तथा काशी नागरी प्रचारणी सभा की स्थापना व विकास में योगदान दिया।

'रत्नाकर' की भक्ति का दार्शनिक आधार वल्लभ और चैतन्य की समन्वित विचारधारा है। वह राधाकृष्ण को उपास्य मानकर वैष्णव धर्म की उदारता लेकर चले हैं। वे सामाजिक कुरीतियों एवं धार्मिक रूढ़ियों का उन्मूलन कर स्वस्थ परंपराओं का पुनरुद्धार करना चाहते हैं। कविता का धरातल वैचारिक, अभिव्यक्ति रीत्यनुमोदित और आत्मनिष्ठ है। वाणी की अतिशय अलंकृति भावाभिव्यंजन में बाधक नहीं होती। आपने कथात्मक, वर्णनात्मक एवं निबन्धात्मक, प्रबन्ध और गेय, पाठ्यसूक्ति तथा प्रबन्ध मुक्तक आदि शैलियों के सफल प्रयोग किए हैं। रत्नाकर की कृतियाँ भक्ति, शृंगार, वीर तथा नीति प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। वे भावना से रससिद्ध, अभिरुचि से अलंकारवादी और प्रवृत्ति से समन्वयवादी हैं।

केन्द्रीय भाव -

विश्व का शक्ति केन्द्र प्रेम है। प्रेम के कारण ही विश्व में सौन्दर्य की व्याप्ति है। प्रेम से ही विश्व में आकर्षण है। कहा गया है कि प्रेम ही ईश्वर है; प्रेम में ईश्वर का निवास है! हमारी सम्पूर्ण सामाजिकता का आधार प्रेम है। प्रेम का क्षेत्र व्यापक और विस्तृत है। प्रेम की परिधि में जड़ चेतन भी समाहित हो जाते हैं।

प्रेम के मूल में राग का भाव है। राग ही अनुराग बनता है। प्रेम हमारी उस संवेदना का विस्तारी भाव है जिसके अन्तर्गत हम अपने भीतर दूसरों की आत्मीय उपस्थिति का अनुभव करते हैं; उसकी कुशल-क्षेम के लिए प्रयत्नरत रहते हैं। प्रेम के सूत्र अनेक तरह के संबंधों की सर्जना करते हैं। हमारे जितने भी संबंध-भाव हैं, उनमें प्रेम की ही भूमिका है।

सामान्यतः साहित्य के अन्तर्गत प्रेम के समस्त संबंध भावों का चित्रण हुआ है किन्तु दाम्पत्य प्रेम का उल्लेख इसमें विस्तार से किया गया है। दाम्पत्य-प्रेम के अन्तर्गत नारी-पुरुष के पारस्परिक आकर्षण का भाव प्रबल होता है। इसके अन्तर्गत ही सौन्दर्य का महत्व है। सौन्दर्य में रूप, चेष्टा और शील का समावेश है। इन सबकी सुन्दरता ही सौन्दर्य का विधान करती है।

हिन्दी साहित्य में प्रेम का व्यापक वर्णन प्राप्त होता है। जायसी ने तो मनुष्य के प्रेम को ही बैकुण्ठ माना है- ''मानुष प्रेम-सदा बैकुंठी।'' तुलसी ने प्रेम को ईश्वर को प्रकट करने वाला कहा है- ''हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम तें प्रकट होहि मैं जाना।''

साहित्य में प्रेम को शृंगार के अन्तर्गत स्थान प्राप्त है। शृंगार में संयोग और वियोग- इन दो भेदों को समाहित किया गया है। रीतिकाल तक आते-आते प्रेम के क्षेत्र में शारीरिक सौन्दर्य अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। इस काल में कुछ गिने-चुने कवियों में ही प्रेम की परिशुद्ध भावना के दर्शन होते हैं। घनानन्द ऐसे कवियों में से एक हैं।

घनानन्द का प्रेम अनुभूतिपरक है। वे वियोग शृंगार के कवि हैं। प्रिय की स्मृतियों का भावना-ग्राही रूप उनके काव्य का प्राण-केन्द्र है। प्रस्तुत पदों में वे प्रेम के स्वरूप की चर्चा करते हैं। वे मानते हैं कि प्रेम सच्चे हृदय से ही किया जाता है। वे बार-बार उसके रूप को, चेष्टाओं को और उसके स्वभाव को याद करते हैं। प्रिय द्वारा किए गए उपेक्षा-भाव की चर्चा करते हुए वे प्राकृतिक उपादानों के रूप में कोयल, वर्षा और बादलों को विरह के उद्दीपकों की तरह चित्रित करते हैं। घनानन्द की उपमाएँ एकदम नवीन हैं।

रीतिकाल और आधुनिक काल की देहरी पर स्थित कवि जगन्नाथदास 'रत्नाकर' ने भी वियोग शृंगार को अपने काव्य का आधार बनाया है। कृष्ण और गोपियों के प्रेम का भावनामय वर्णन उनकी संकलित कविता में है। गोपियों में कृष्ण द्वारा लिखे गए पत्र को पढ़ने की आतुरता, उनकी विरह विगलित मनोदशा, उनका कृष्ण के प्रति अतिशय समर्पण का आलंकारिक वर्णन किया है। रत्नाकर के पदों में शब्दालंकार के साथ रूपक और प्रतीकों का भी उत्कर्षशाली प्रयोग है।

इन दोनों कवियों की कविता में प्रेम की अनुभूतियों का लोकोत्तर पक्ष प्राप्त होता है।

घनानंद के पद

आपुहि तो मन हेरि हँसे,
तिरछे करि नैननि नेह चाव मैं।
हाय दई! सुविसारि दई सुधि,
कैसी कएँ, सौ कहौ कित जावँ मैं।
मीत सुजान, अनीति कहा यह,
ऐसी न चाहिए प्रीति के भाव मैं।
मोहन मूरति देखिबें को
तरसावत हौ बसि एक ही गाँव में।। 1 ॥

पहिले अपनाय सुजान सनेह सौं,
क्यों फिरि नेह कै तोरियै जू।
निरधार अधार है धार मँझार,
दई, गहि बाहँ न बोरियै जू।।
घन आनन्द आपने चातक कौं,
गुन बाँधि लै मोह न छोरियै जू।
रस प्याय कै ज्याय बढ़ाय कै आस,
बिसास में यों विष घोरियै जू।। 2 ॥

कारी कूरि कोकिल! कहाँ को बैर काढ़ति री,
कूकि कूकि अबहीं करेजो किन कोरि लै।
पैड़े परे पापी ये कलापी निसि-द्यौस ज्यों ही,
चातक! रे घातक ह्वै तू हू कान फोरि लै।।
आनंद के घन प्रानजीवन सुजान बिना,
जानि कै अकेली सब घेरो दल जोरि लै।
जोलौं करैं आवन विनोद-बरसावन वे,
तो लौं रे डरारे बज मारे घन! घोरि लै।। 3 ॥

– घनानंद

उद्धव-प्रसंग

भेजे मनभावन के उद्धव के आवन की
सुधि ब्रज-गाँवनि में पावन जबैं लगीं।
कहैं 'रतनाकर' गुवालिनि की झौरि-झौरि
दौरि-दौरि नंद-पौरि आवन तबै लगीं।।
उझकि-उझकि पद-कंजनि के पंजनि पै
पेखि-पेखि पाती छाती छोहनि छबै लगीं।
हमकौं लिख्यौ है कहा, हमकौं लिख्यौ है कहा
हमकौं लिख्यौ है कहा कहन सबै लगीं।।1।।

सुनि सुनि ऊधव की अकह कहानी कान
कोऊ थहरानी कोऊ थानहि थिरानी हैं।।
कहैं 'रतनाकर' रिसानी, बररानी कोऊ
कोऊ बिलखानी, बिकलानी, बिथकानी हैं।।
कोऊ सेद-सानी, कोऊ भरि दृग-पानी रहीं
कोऊ घूमि-घूमि परीं भूमि मुरझानी हैं।
कोऊ स्याम-स्याम कह बहकि बिललानी कोऊ
कोमल करेजौ थामि सहमि सुखानी हैं।।2।।

आए हौ सिखावन कौं जोग मथुरा तैं तोपै
ऊधौ ये बियोग के बचन बतरावौ ना।
कहैं 'रतनाकर' दया करि दरस दीन्यौ
दुख दरिबै कौं, तोपै अधिक बढ़ावौ ना।।
टूक-टूक ह्वैहै मन-मुकुर हमारौ हाय
चूकि हूँ कठोर बैन-पाहन चलावौ ना।
एक मनमोहन तौ बसिकै उजार्‌यौ मोहिं
हिय में अनेक मनमोहन बसावौ ना।।3।।

छावते कुटीर कहूँ रम्य जमुना कै तीर

गौन रौन-रेती सों कदापि करते नहीं।

कहैं 'रतनाकर' बिहाइ प्रेम-गाथा गूढ़

स्रोंन रसना मैं रस और भरते नहीं।।

गोपी ग्वाल बालनि के उमड़त आँसू देखि

लेखि प्रलयागम हूँ नैंकु डरते नहीं।

होतौ चित चाब जौ न रावरे चितावन को

तजि ब्रज-गाँव इतै पाँव धरते नहीं।।4।।

– जगन्नाथ दास 'रत्नाकर'

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. चातक को घातक क्यों कहा गया है?
2. विश्वास में विष घोलने का काम किसने किया है?
3. मथुरा में योग सिखाने कौन गए थे?
4. नंद के आँगन में गोपियाँ क्यों एकत्र हुईं?
5. कुटीर कौन-सी नदी के किनारे बनाने की बात कही गई है?

लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. 'तिरछे करि नैननि नेह के चाव मैं' का आशय स्पष्ट कीजिए।
2. घनानन्द सुजान को क्या उलाहना देते हैं?
3. रत्नाकर की गोपियों के मन में कौन बसा है? उनके विचार स्पष्ट कीजिए।
4. रत्नाकर के अनुसार गोपी-ग्वालबालों की मनोदशा को समझाइए।
5. उद्धव के ब्रज आगमन की गोपियों पर क्या प्रतिक्रिया हुई?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न –

1. संकलित कविता के आधार पर ''प्रेम और सौन्दर्य'' पर घनानंद के विचार लिखिए।

2. **निम्नलिखित अंशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –**

(अ) पहिले अपनाय सुजान सनेह सौं,
क्यों फिर नेह कै तोरियै जू।

निरधार अधार है धार मँझार,
दई, गहि बाहँ न बोरियै जू

(आ) आए हौं सिखावन कौं जोग मथुरा तैं तोपैं
ऊधो ये वियोग के बचन बतरावौ ना।
कहैं 'रत्नाकर' दया करि दरस दीन्यौ
दुख दरिबै कौ, तोपै अधिक बढ़ावौ ना।

3. घनानंद को 'प्रेम की पीर' कहना कहाँ तक उचित है?

4. 'उद्धव शतक' के आधार पर सिद्ध कीजिए कि 'रत्नाकर को मार्मिक स्थलों की भलीभाँति पहचान है।'

काव्य सौन्दर्य

1. निम्नलिखित शब्दों के पर्यायवाची शब्द लिखिए -

नेत्र, मार्ग, आनंद, दया, कठोर

2. घनानंद के संकलित छंदों में कौन-सा रस है?

3. रत्नाकर की भाषा के संबंध में अपने विचार लिखिए।

4. निम्नलिखित काव्य पंक्तियों में अलंकार पहचान कर लिखिए -

(अ) निरधार अधार है धार मँझार
(आ) हिय में अनेक मनमोहन बसावौ ना।
(इ) टूक-टूक ह्वै है मन-मुकुर हमारौ हाय।
(ई) एक मनमोहन तौ बसिकै उजार्‌यो मोहिं।
(उ) उझकि-उझकि पद-कंजनि के पंजनि पै।

ध्यान दीजिए-

सहज सरल रघुवर बचन, कुमति कुटिल करि जान
चलइ जोंक जिमि वक्र गति, जद्यपि सलिल समान

उपर्युक्त उदाहरण ध्यान से पढ़िए।इन पंक्तियों में 'दोहा' छंद का प्रयोग हुआ है। छंद कविता की गीतात्मकता में वृद्धि करते हैं। कविता के रचना-विधान को 'छंद' कहते हैं। किसी निश्चित क्रम में गति और यति का निर्वाह करते हुए संगीतमय या भावपूर्ण जो रचना की जाती है, उसके रचना-विधान का नाम छंद है।

छंद दो प्रकार के होते हैं -

- **मात्रिक** - मात्राओं की गिनती निश्चित रहती है।
- **वर्णिक** - वर्णों की संख्या एवं रूप निश्चित रहता है, मात्राएँ नहीं।

मात्रिक छंद

छप्पय-

इस विषम मात्रिक छंद में छह चरण होते हैं। इसके प्रथम चार चरण रोला और दो चरण उल्लाला के होते हैं। रोला के प्रत्येक चरण में 11-13 की यति पर 24 मात्राएँ और उल्लाला के हर चरण में 15-13 की यति पर 28 मात्राएँ होती हैं-

उदाहरण -

जहाँ स्वतन्त्र विचार न बदलें मन में मुख में,
जहाँ न बाधक बनें सबल निबलों के सुख में।
सबको जहाँ समान निजोन्नति का अवसर हो।
शान्तिदायिनी निशा, हर्षसूचक वासर हो॥
सब भाँति सुशासित हों जहाँ, समता के सुखकर नियम॥
बस उसी स्वशासित देश में जागें हे जगदीश हम।

रोला + उल्लाला = छप्पय

वर्णिक छंद

कवित्त-

इस वर्णिक छंद के प्रत्येक चरण में 16 और 15 के विराम से 31 वर्ण होते हैं। प्रत्येक चरण का अंतिम वर्ण गुरु होता है।

उदाहरण -

सच्चे हो पुजारी तुम प्यारे प्रेम मंदिर के,
उचित नहीं है तुम्हें दुख से कराहना,
करना पड़े जो आत्म त्याग अनुराग वश,
तो तुम सहर्ष निज भाग्य की सराहना।
प्रीति का लगाना कुछ कठिन नहीं है, सखे,
किन्तु हैं कठिन नित्य नेह का निबाहना,
चाहना जिसे हैं तुम्हें चाहिए सदैव उसे,
तन मन प्राण से प्रमोद युत चाहना।

सवैया-

बाईस से लेकर छब्बीस वर्ण तक के छंद को सवैया कहते हैं। ये अनेक प्रकार के होते हैं -

मत्तगयन्द, दुर्मिल, मदिर, चकोर, किरीट आदि।

मत्तगयन्द सवैया -

इस वर्णिक छंद में चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में सात भगण और दो गुरु के क्रम से 23 वर्ण होते हैं। इसे मालती सवैया भी कहते है।

उदाहरण-

धूरि भरे अति शोभित श्यामजु, तैसि बनी सिर सुंदर चोटी।
खेलत खात फिरै अगना, पग पैंजनि बाजति पीरि कछौटी।

वा छवि को रसखानि बिलोकत, वारत काम कलानिधि कोटी।
कागहिं भाग बड़े सजनी, हरि हाथ सौ ले गयौ माखन रोटी।।

दुर्मिल -

इस वर्णिक छंद के प्रत्येक चरण में 24 वर्ण होते हैं। इस छंद को 'चंद्रकला' भी कहते हैं।

उदाहरण -

पुर तैं निकसी रघुवीर वधू धरि-धीर दये मग में डग द्वै।
झलकीं भरि भाल कनी जल की, पुट सूखि गये मधुराधर वै।
फिर बूझति हैं चलनौ अब केतिक पर्णकुटी करिहौ कित ह्वै।
तिय की लखि आतुरता पिय की अँखियाँ अति चारु चलीं जल च्वै।

5. छप्पय किन मात्रिक छंदों के योग से बनता है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

योग्यता विस्तार

1. ब्रजभाषा के माधुर्य को जानने के लिए भक्ति काल, रीतिकाल के अन्य कवियों की रचनाएँ पढ़िए।
2. 'सूरसागर' ग्रंथ से इसी भाव वाले अन्य पदों को छाँटकर पढ़िए।
3. रीतिकाल की तीनों धाराओं (रीतिबद्ध, रीति सिद्ध एवं रीति मुक्त) के विषय में शिक्षक से जानकारी प्राप्त कीजिए।

शब्दार्थ

घनानन्द के पद

नैननि = नेत्र, *नेह* = प्रेम, *अनीति* = अन्याय, नीति के विरुद्ध, *तरसावत* = ललचाना, तरसाना, *धार-मँझार* = धारा के मध्य में, *किन कोरि लै* = खरोंच कर निकाल क्यों नहीं लेती, *पैड़े परै* = पीछे पड़े हैं, *कलापी* = मोर, *बजयारे* = वज्राहत, वज्र से मारा हुआ, बहुत दुष्ट, *घोरि* = गर्जना करना।

उद्धव प्रसंग

झौरि-झौरि = झुंड के झुंड, *दौरि-दौरि* = दौड़-दौड़कर, *नंद पौरि* = नंद के आँगन (निवास), *उझकि - उझकि* = उझक-उझक कर या ऐड़ी उठा-उठाकर देखना, *थहरानी* = काँप गई। *थानहि* = स्थान पर ही, *थिरानी* = स्थिर हो जाना, जड़ हो जाना, *विथकानि* = व्यथित (शिथिल), *सेद* = स्वेद (पसीना), *जोग* = योग शास्त्र, *टूक-टूक* = टुकड़े-टुकड़े, *मन - मुकुर* = मन रूपी दर्पण, *बैन - पाहन* = वचनों के पत्थर। *छावते* = छबाते, बनाते, *कुटीर* = कुटिया, *चाब* = चाव से, रुचि से।

❋ ❋ ❋

नीति काव्य

कबीर

कवि परिचय :

जन भाषा में भक्ति, नीति व दर्शन की किरणों का आलोक विकीर्ण करने वाले कवियों में कबीर अग्रगण्य हैं। कबीर का जन्म काशी में संवत् 1455 के लगभग माना जाता है ।

कबीर की प्रामाणिक उपलब्ध कृति 'बीजक' है। इसमें साखी, सबद और रमैनी तीन भाग हैं।

कबीर का आविर्भाव ऐसे समय में हुआ जब समाज में कर्मकाण्ड का प्राचुर्य और आडम्बरपूर्ण आचार व्यवहार का प्राबल्य था।

कबीर शास्त्रीय ज्ञान की अपेक्षा अनुभव को महत्व देते हैं। उन्होंने माना ब्रह्म एक है, जो कुछ भी दृश्य है वह माया है, मिथ्या है। उन्होंने माया का मानवीकरण कर उसे कंचन और कामिनी का पर्याय माना। उनका ईश्वर निर्विकार और अरूप है। उसे अवतार में प्रतिष्ठित न कर उन्होंने प्रतीकों में स्थापित किया। ब्रह्म को पति रूप मानने पर आत्मा उसकी प्रेयसी बन जाती है। प्रियतम और प्रेयसी के इसी संबंध में जो दाम्पत्य प्रेम लक्षित है, वहीं कबीर का रहस्यवाद है।

कबीर की भाषा पूरवी जनपद की भाषा है। इसे सधुक्कड़ी भाषा भी कहा गया है। यद्यपि उन्होंने भाषा सौष्ठव की ओर ध्यान नहीं दिया तथापि उनकी भाषा सरस और सुबोध है। अध्यात्म का मर्म समझाने के लिए उन्होंने रूपक और प्रतीकों के साथ उलटबांसी का प्रयोग भी किया।

कबीर ने जाति, वर्ग एवं सम्प्रदायों की सीमाओं का अतिक्रमण कर ऐसे मानव धर्म और मानव समाज की स्थापना की जिसमें विभिन्न दृष्टिकोण रखने वाले विभिन्न मताग्रही भी निःसंकोच सम्मिलित हो सकते हैं। कबीर का निर्मल व्यक्तित्व और निर्द्वन्द्व दृष्टिकोण इतना व्यापक और प्रभावशाली था कि उनके विचारों के आधार पर एक सम्प्रदाय ही चल पड़ा जिसे 'सन्त सम्प्रदाय' की संज्ञा मिली। इस सम्प्रदाय में दादू, सुन्दरदास, गरीबदास, चरनदास आदि सन्त कवि हुए हैं।

कवि परिचय :

बिहारीलाल

रीतिकाल की भावधारा को आत्मसात् करके भी आचार्यत्व से मुक्त रहने वाले कवि बिहारीलाल का जन्म संवत् 1652 वि. (सन् 1595 ई.) में ग्वालियर के पास गोविन्दपुर ग्राम में हुआ था। इनके पिता केशवराय, ग्वालियर छोड़कर ओरछा चले गए। वहीं इन्होंने आचार्य केशवदास से काव्यशिक्षा ग्रहण की। ओरछा में इन्होंने, काव्यग्रंथों और संस्कृत, प्राकृत का अध्ययन किया। आगरा जाकर इन्होंने उर्दू-फारसी का अध्ययन किया; वहाँ ये अब्दुर्रहीम खानखाना के सम्पर्क में आए। संवत् 1720 वि. (सन् 1663) में आपका स्वर्गवास हो गया ।

इनकी एक ही रचना 'सतसैया' मिलती है। इसमें 713 दोहे हैं। हिन्दी में समास-पद्धति की शक्ति का परिचय सबसे पहले बिहारी ने दिया। सांग-रूपकों का निर्वाह, पर्याय-व्यापारों के समाहार और विविध चेष्टाओं के एक साथ संयोजन की बहार बिहारी के चुस्त दोहों में देखी जा सकती है। सतसई के दोहों में अर्थ की गंभीरता और मार्मिक प्रभावोत्पादकता है। कम शब्दों में अधिक से अधिक मर्मस्पर्शी अर्थ की अभिव्यक्ति क्षमता होने के कारण इनकी प्रशंसा में कहा जाता है-

``सतसइया के दोहरे ज्यों नाविक के तीर।
देखन में छोटे लगें, घाव करें गंभीर।''

बिहारी की काव्य प्रतिभा बहुमुखी थी। नख-शिख वर्णन, नायिका भेद, प्रकृति चित्रण, रस-अलंकार सभी कुछ बिहारी की रचनाओं में उत्कृष्ट है। विदग्ध सूक्तियों के वे बादशाह हैं। अन्योक्तियाँ भी सुंदर हैं। इनके काव्य में रूपक, उत्प्रेक्षा, उपमा और श्लेष अलंकारों का प्रयोग दृष्टव्य है। बिहारी की भाषा ब्रज है। कहीं-कहीं बुन्देलखण्डी की भी छाप है। नख-शिख के अन्तर्गत इनकी अधिकतर रचनाएँ नेत्रों पर हैं।

बिहारी की व्याकरण से सधी हुई भाषा में मुहावरों के प्रयोग, सांकेतिक शब्दावली और सुष्ठु पदावली का समावेश है। भाषा प्रौढ़ एवं प्रांजल है। दोहे जैसे छोटे छन्द के माध्यम से बिहारी ने जितने विस्तारित अर्थों को प्रकाशमान किया है, वह अपूर्व है। रचनाओं में कवित्त शक्ति और काव्यरीतियों का जैसा सुन्दर सम्मिश्रण बिहारी में है वैसा किसी अन्य रीति कालीन कवि में अलभ्य है।

केन्द्रीय भाव -

समाज और व्यक्ति के सामंजस्य का आधार 'नीति' है। व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास के लिए समाज की भूमिका और समाज के उत्थान के लिए व्यक्ति का आचरण इन दोनों दिशाओं को साधने का लक्ष्य नीति में अंतर्निहित है। नीति काव्य जीवन-व्यवहारों से प्रकट होने वाले अनुभवों का एक ऐसा आकर्षक कोश है, जिसमें जीवन मूल्यों का संरक्षण होता है। नीतिगत चेतना का विकास ही उदात्त मानवीय प्रवृत्तियों का आधार निर्मित करता है। जीवन के संघर्षों और उलझनों में नीति कथन मानव का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस रूप में नीति कथन शिक्षा का ही एक रूप होते हैं। यही कारण है कि प्राय: प्रत्येक युग के काव्य में नीति तत्व किसी न किसी रूप में विद्यमान रहता है।

नीति कथन बाल-मन पर गहरे संस्कार डालते हैं और वे जीवन में स्थायी बनकर निरंतर दिशा निर्देश की भूमिका का निर्वाह करते हैं। इसलिए कविता के स्थायी प्रभावों के अंतर्गत नीति कथनों का प्रभाव जीवन निर्माण हेतु सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। प्रत्येक युग के काव्य ने नीति से संबंधित उक्तियाँ प्रस्तुत की हैं। जायसी, कबीर, तुलसी, गिरधर, रहीम आदि कवियों ने अपने काव्य में नीति कथनों को पर्याप्त स्थान प्रदान किया है।

कबीर के काव्य में अनेक स्थलों पर नीति परक कथन सहजता से उपलब्ध हो जाते हैं। नीति कथनों का सीधा संबंध जीवनानुभवों से है, कबीर के पास गहरे जीवन अनुभव थे। इन्हीं अनुभवों के आधार पर कबीर के नीति कथन मार्मिक बन पड़े हैं। प्रस्तुत काव्यांशों में 'सत्संगति' के महत्व को रेखांकित करते हुए शिक्षा और उपदेश के महत्व को प्रतिपादित किया गया है। विभिन्न उपमाओं के माध्यम से सत्संग और कुसंग के भेद को कबीर ने गहराई से स्पष्ट किया है। 'विचार' के अन्तर्गत उन्होंने परिस्थितियों के परिवर्तन की ओर संकेत किया है। जो कभी शक्तिशाली होता है वह कभी निर्बल भी हो जाता है इसलिए शक्तिशाली को अभिमान नहीं करना चाहिए। 'वाणी' की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए उन्होंने वाणी संयम को जीवन की उपलब्धि माना है। जो अपनी वाणी पर संयम कर लेते हैं वे सभी जगह सफल होते हैं। उनकी 'उलटबांसियाँ' भी जीवन के रहस्यमय अनुभवों को व्यक्त करती हैं।

रीतिकाल के कवियों का प्रधान स्वर यद्यपि शृंगार केन्द्रित है किन्तु इस युग के कवि सामाजिक व्यवहार के भी कवि थे। इसलिए उनके काव्य में नीति कथनों का भी समावेश रहता है।

'बिहारी सतसई' के नीतिपरक दोहों ने जीवन व्यवहार के अनेक पक्ष प्रस्तुत किए हैं। संकलित दोहों में बिहारी ने सुंदरता को सापेक्षता में ही स्वीकार किया है। समय के फेर से सज्जन भी विपत्ति में पड़ जाते हैं। बुरे जनों को सम्मान मिलने लगता है। कोरी प्रशंसा से कोई बड़ा नहीं बनता है। अपने गुणों से ही व्यक्ति बड़ा बनता है। मनुष्य की विनम्रता ही उसे बड़ा बनाती है। समान संग होने पर ही शोभा बढ़ती है। बड़ों की भूल भूल नहीं कही जाती है। धन बढ़ने पर भी मन पर संयम रखना चाहिए। दुष्ट यदि दुष्टता करना छोड़ देता है तो उसे अनिष्ट की आशंका बढ़ जाती है। अवसरवाद केवल कुछ दिनों तक ही सम्मान दिला सकता है, जिस जल से प्यास बुझती है वही महत्वपूर्ण होता है आदि नीति सिद्धांतों को बिहारी ने अनेक उत्प्रेक्षाओं और रुपकों के माध्यम से व्यक्त किया है।

अमृतवाणी

1. संगति-

कबीर संगति साधु की, जो करि जाने कोय।
सकल बिरछ चन्दन भये, बाँस न चन्दन होय।।

कबीर कुसंग न कीजिये, पाथर जल न तिराय।
कदली सीप भुजंग मुख, एक बूँद तिर भाय।।

2. उपदेश-

देह धरे का गुन यही, देह देह कछु देह।
बहुरि न देही पाइये, अबकी देह सुदेह।।

जो जल बाढ़ै नाव में, घर में बाढ़ै दाम।
दोऊ हाथ उलीचिये, यही सयानो काम।।

3. विचार-

माटी कहै कुम्हार से, क्या तू रौंदे मोहि।
एक दिन ऐसा होयगा, मैं रौदोंगी तोहि।।

यह तन काँचा कुंभ है, लिये फिरै थे साथ।
टपका लागा फुटि गया, कछू न आया हाथ।।

4. वाणी-

शब्द सम्हारे बोलिये, शब्द के हाथ न पाँव।
एक शब्द औषधि करे, एक शब्द करे घाव।।

जिभ्या जिन बस में करी- तिन बस कियो जहान।
नहिं तो औगुन उपजै, कहि सब सन्त सुजान।।

5. विपर्यय- (उलट बांसियाँ)-

नदिया जल कोयला भई, समुन्दर लागी आग।
मच्छी बिरछा चढ़ि गई, उठ कबीरा जाग।।

तिल समान तो गाय है, बछड़ा नौ-नौ हाथ।
मटकी भरि-भरि दुहि लिया, पूँछ अठारह हाथ।।

– कबीर

दोहे

समै समै सुन्दर सबै, रूप कुरूप न कोय।
मन की रुचि जेती जितै, तिन तेती रुचि होय।।1।।

मरतु प्यास पिंजरा पर्‌यौ, सुआ दिनन के फेर।
आदरु दै दै बोलियतु, बायस बलि की बेर।।2।।

बड़े न हूजे गुननि बिन, बिरद बड़ाई पाय।
कहत धतूरे सौं कनक, गहनो गढ़ौ न जाय।।3।।

नर की अरु नल नीर की, गति एकै करि जोय।
जेतो नीचो ह्वै चलै, तेतो ऊँचो होय।।4।।

सोहतु संगु समान सौं, यहै कहै सबु लोगु।
पान-पीक ओठनु बनै, काजर नैननु जोगु।।5।।

को कहि ''सकै बड़ेन सों, लखैं बड़ी यै भूल।
दीने दई गुलाब की, उनि डारनि वे फूल।।6।।

बढ़त बढ़त संपति-सलिलु, मन सरोजु बढ़ि जाइ।
घटत घटत सु न फिरि घटै, बरु समूल कुम्हिलाइ।।7।।

बुरौ बुराई जौ तजै, तौ चितु खरौ डरातु।
ज्यौं निकलंकु मयंकु लखि, गनैं लोग उतपातु।।8।।

दिन दस आदरु पाइकै, करि लै आपु बखानु।
जौ लगि काग! सराधपखु, तौ लगि तौ सनमानु।।9।।

अति अगाधु, अति औथरौ, नदी, कूप, सरु, बाइ।
सो ताकौ सागरु, जहाँ जाकी प्यासु बुझाइ।।10।।

– बिहारी

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. कबीर ने किसकी संगति करने के लिए कहा है ?
2. नाव में पानी भर जाने पर सयानों का क्या कर्त्तव्य है?

3. कबीर के अनुसार शरीर रूपी घड़े की विशेषताएँ बताइए।

4. बुरे आदमी द्वारा बुराई त्याग देने का खरे व्यक्तियों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

5. बड़प्पन प्राप्त करने के लिए केवल नाम ही काफी नहीं है। यह बात बिहारी ने किस उदाहरण के द्वारा कही है?

लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. मिट्टी कुम्हार को क्या सीख देती है?

2. कबीर ने शब्द की क्या महिमा बताई है?

3. एक ही वस्तु किसी को सुन्दर और किसी को कुरूप क्यों नजर आती है?

4. संपत्ति रूपी जल के निरन्तर बढ़ने से मनुष्य पर क्या प्रभाव पड़ता है?

5. क्षणिक आदर प्राप्त कर आत्म प्रशंसारत व्यक्तियों का अंत क्या होता है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. कबीर कुसंग के दुष्प्रभाव को किन-किन उदाहरणों से स्पष्ट करते हैं, लिखिए।

2. देहधारी होने के कौन-कौन से गुण हैं?

3. 'नदिया जल कोयला भई' से कबीर का क्या तात्पर्य है?

4. नर और नल की तुलना कर बिहारी क्या कहना चाहते हैं?

5. 'सभी समानता में ही शोभा पाते हैं।' बिहारी ने किन उदाहरणों से इस कथन की पुष्टि की है?

6. **निम्नलिखित पद्यांशों की सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए-**

   (i) तिल समान तो..... अठारह हाथ।

   (ii) को कहि सकै बड़ेन..... वे फूल।

   (iii) मरतु प्यास पिंजरा..... की बेर।

   (iv) अति अगाधु अति..... जाकी प्यासु बुझाइ।

काव्य सौन्दर्य -

1. **निम्नलिखित शब्दों के विलोम रूप लिखिए-**

   कुसंग, अज्ञ, अभ्यस्त, उदात्त

2. **निम्नलिखित तद्भव शब्दों को तत्सम में बदलिए-**

   पाथर, औगुन, सनमानु, मच्छी, काग

3. **निम्नलिखित छंदों की मात्राएँ, गिनकर छंद की पहचान कीजिए -**

   (1) समै समै सुन्दर सबै, रूप कुरूप न कोय।
   मन की रुचि जेती जितै, तिन तेती रुचि होय।

(2) को कहि सकै बड़ेन सौं, लखैं बड़ी यै भूल।
दीने दई गुलाब की, उनि डारनि वे फूल।।

4. **बिहारी के दोहों में से माधुर्य गुणयुक्त दोहे छाँटकर लिखिए।**

5. **निम्नलिखित पंक्तियों में प्रयुक्त अलंकार छाँटकर लिखिए -**

अति अगाधु अति औथरों, नदी, कूप, सरु, बाइ।
सौ ताकौं, सागरु, जहाँ जाकी, प्यासु बुझाइ।

6. **'कबीर की साखियों में उलटबाँसियों का प्रयोग हुआ है।' इस कथन की पुष्टि हेतु उदाहरण दीजिए।**

ध्यान दीजिए-

देह धरे का गुन यही, देह देह कछु देह।
बहुरि न देही पाइये, अबकी देह सुदेह।।

पद में 'देह' शब्द की आवृत्ति है। 'देह' शब्द के भिन्न-भिन्न अर्थ हैं। देह का एक अर्थ है - शरीर, दूसरा अर्थ है- 'देना'। अत: यहाँ यमक अलंकार है। जहाँ शब्दों या वाक्यांशों की आवृत्ति एक या एक से अधिक बार होती है किन्तु उनके अर्थ भिन्न-भिन्न होते हैं, वहाँ **यमक** अलंकार होता है।

जहाँ एक ही बार प्रयुक्त हुए शब्द से एक ही स्थान पर दो या दो से अधिक अर्थ निकलते हैं, वहाँ **'श्लेष'** अलंकार होता है।

उदाहरणार्थ -

'जे रहीम गति दीप की, कुल कपूत गति सोय।
बारे उजियारो करै, बढ़ै अँधेरो होय।।

यहाँ 'बारे' का अर्थ 'लड़कपन' और 'जलाने' से है, और 'बढ़े' का अर्थ 'बड़ा होने' और 'बुझ जाने' से है।

जब कथन में देखने और सुनने पर निन्दा सी जान पड़े किन्तु वास्तव में प्रशंसा हो, वहाँ व्याजस्तुति अलंकार होता है। इसके विपरीत जहाँ कथन में स्तुति का आभास हो किन्तु वास्तव में निन्दा हो, वहाँ व्याज-निन्दा अलंकार होता है।

उदाहरणार्थ -

व्याज स्तुति - गंगा क्यों टेढ़ी चलती हो, दुष्टों को शिव कर देती हो।
व्याज निन्दा - राम साधु, तुम साधु सयाने। राम मातु भलि सब पहिचाने।।

इसी प्रकार जब कारण के होते हुए भी कार्य नहीं होता, वहाँ **विशेषोक्ति** अलंकार होता है। इसके विपरीत जब कारण न होने पर भी कार्य का होना बताया जाता है, वहाँ **विभावना** अलंकार होता है, जैसे-

विशेषोक्ति - मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं बिरंचि सम।

विभावना - बिनु पदचलै सुनै बिनु काना।
कर बिनु करम करै बिधि नाना।।

7. **यमक तथा श्लेष अलंकारों के उदाहरण लिखिए।**

8. **व्याज स्तुति तथा व्याज निन्दा अलंकार में अन्तर स्पष्ट कीजिए।**

योग्यता-विस्तार-

- कबीर के जन्म स्थान और निर्वाण स्थान की सैर कीजिए।
- कबीर -पंथ के बारे में जानकारी एकत्र कीजिए।
- बिहारी औरंगजेब के राजपूत सेनापति मिर्जा राजा जयसिंह के दरबारी कवि थे। उन्होंने मिर्जा राजा जयसिंह को शिवाजी पर आक्रमण करने के लिए जाते समय कौन सा दोहा कहा- ज्ञात कीजिए और उसके प्रभाव की चर्चा कीजिए।
- कबीर तथा बिहारी के अतिरिक्त नीति परक दोहे हिन्दी के किन अन्य कवियों ने लिखे हैं, उनके नाम और पाँच-पाँच नीतिपरक दोहे लिखिए।

शब्दार्थ

अमृतवाणी

बिरछ = वृक्ष *पाथर* = पत्थर *तिराय* = उतराता (तैरता) *कदली* = केला

देह = शरीर *देह* = देना (दान करना) *दाम* = धन

उलीचिए = वितरित कीजिए (धन के संदर्भ में) बाहर फेंकिए (पानी के संदर्भ में)

नीति के दोहे

जेती = जितनी *जितै* = जिनकी *तिन* = उनकी *तेती* = उतनी, *सुआ* = तोता

बायस = कौआ *सराध पखु* = श्राद्ध पक्ष (पितर पक्ष) *बेर* = समय,

बोलियतु = बुलाते हैं *मनसरोजु* = मन रूपी कमल *समूल* = जड़ सहित

मयंक = चन्द्रमा *अगाध* = अथाह *औथरौं* = उथला,

सरु = सरोवर

❋ ❋ ❋

प्रकृति-चित्रण

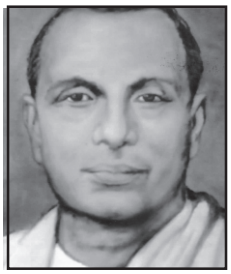

जयशंकर प्रसाद

कवि परिचय :

छायावादी काव्य के आधारस्तम्भ जयशंकर प्रसाद का जन्म सन् 1889 में वाराणसी, उत्तरप्रदेश में हुआ। इनके पिता (सुंघनी साहू) वैभवशाली थे तथा विद्वानों व कलाकारों का सदा सम्मान करते थे। विलक्षण प्रतिभा के धनी प्रसादजी एक साथ कवि, नाटककार, कहानीकार, उपन्यासकार तथा निबंधकार थे। 15 नवम्बर सन् 1937 को आप परलोक सिधार गए। 'कामायनी' महाकाव्य आपकी युगांतरकारी रचना है। आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं-

1. काव्य - 'कामायनी', 'कानन-कुसुम', 'प्रेम-पथिक', 'झरना', 'लहर', 'आँसू', 'महाराणा का महत्व'। 2. नाटक - 'राज्यश्री', 'अजातशत्रु', 'चंद्रगुप्त', 'स्कंदगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी'। 3. उपन्यास - 'कंकाल', 'तितली', 'इरावती'। 4. कहानी संग्रह - 'आकाशदीप', 'आँधी', 'इंद्रजाल', 'प्रतिध्वनि', 'छाया'। 5. निबंध संग्रह - 'काव्य और कला' तथा 'अन्य निबंध'।

प्रसादजी के साहित्य में नैतिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना का समावेश है। उन्होंने भारतीय अतीत के गौरवपूर्ण रूप को अपने साहित्य में उभारा है। उनके साहित्य में उत्साह और उमंग का आलोक है। प्रेम करुणा तथा सौन्दर्य की स्निग्ध आभा है।

प्रसादजी की भाषा में सहज प्रवाह तथा काव्य सौंदर्य है। रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, संदेह, विरोधाभास आदि अलंकारों के साथ-साथ मानवीकरण का सफल प्रयोग उन्होंने किया है। उनके गीतों में गेयता, सरसता, अनुभूति की गहनता, संक्षिप्तता तथा प्रभावोत्पादकता विद्यमान है। प्रबंध काव्य में रसपूर्णता, छन्द विविधता तथा कथा-क्रम का पूर्ण निर्वाह है।

हिन्दी के छायावादी कवियों में प्रसादजी का प्रमुख स्थान है। उन्होंने भाषा को लाक्षणिक स्वरूप प्रदान किया। कविता को स्थूल वर्णन की परिधि से निकाल कर उसमें सूक्ष्म मनोभावों का सजीव चित्रण किया। अपनी बहुमुखी तथा सर्वतोन्मुखी प्रतिभा से प्रसाद जी ने हिन्दी साहित्य में एक नूतन युग का आरम्भ किया।

भवानी प्रसाद मिश्र

कवि परिचय :

भवानी प्रसाद मिश्र का जन्म सन् 1913 में मध्यप्रदेश के होशंगाबाद जिले के टिगरिया ग्राम में हुआ था। कविता और साहित्य के साथ-साथ राष्ट्रीय आन्दोलन में जिन कवियों की भागीदारी थी उनमें श्री मिश्र प्रमुख थे। गांधीवाद पर आस्था रखने वाले मिश्र जी ने गांधी वाङ्मय के हिन्दी खंडों का सम्पादन कर कविता और गांधी जी के बीच सेतु का काम किया। सन् 1985 में आप अपनी इहलीला समाप्त कर दिव्य ज्योति में विलीन हो गए।

'सतपुड़ा के जंगल', 'सन्नाटा', 'गीत फरोश', 'चकित है दुख', 'बुनी हुई रस्सी', 'खुशबू के शिलालेख', 'अनाम तुम आते हो', 'इदं न मम्' मिश्र जी की प्रमुख रचनाएँ हैं।

भवानी प्रसाद मिश्र की कविता हिन्दी की सहज लय की कविता है। इस सहजता का सीधा संबंध गांधी के चरखे की लय से भी जुड़ता है इसीलिए उन्हें कविता का गांधी भी कहा गया है। मिश्र जी की कविताओं में बोल चाल के, गद्यात्मक से लगते वाक्य विन्यास को ही कविता में बदल देने की अद्भुत क्षमता है। इसी कारण उनकी कविता सहज और लोक के अधिक समीप है। श्री मिश्र जिस किसी विषय को उठाते हैं उसे घरेलू बना लेते हैं। आँगन का पौधा, शाम और दूर दिखती पहाड़ की नीली चोटी भी जैसे परिवार का एक अंग हो जाती है।

नई कविता के दौर के कवियों में मिश्र जी के यहाँ व्यंग्य और क्षोभ भरपूर है किन्तु वह प्रतिक्रिया परक न होकर सृजनात्मक है। गांधीवाद पर आस्था रखने के कारण उन्होंने अहिंसा और सहनशीलता को रचनात्मक अभिव्यक्ति दी है।

साहित्य के क्षेत्र में भवानी प्रसाद मिश्र को साहित्य अकादमी मध्य प्रदेश शासन का शिखर सम्मान, दिल्ली प्रशासन का गालिब पुरस्कार एवं पद्म श्री से भी अलंकृत किया गया।

केन्द्रीय भाव -

मनुष्य के विकास के मूल में प्रकृति की भूमिका महत्वपूर्ण है। प्रकृति ने मनुष्य को जीवन संसाधन तो प्रदान किए ही हैं उसे पाला और पोसा भी है। राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने तो प्रकृति-चर्चा करते हुए लिखा है- ''प्रकृति ही रही पालना यहाँ।'' प्रकृति ने स्वयं पालना बनकर मनुष्य को आह्लादित किया है। प्रकृति का अनुकरण करके ही मनुष्य ने अपने परिगत भाव-संसार और कला-संसार की सृष्टि की है। मनुष्य के भाव-स्पंदनों में प्रकृति की हलचलों का भी प्रभाव है। प्रकृति मनुष्य को उदार और संवेदनशील बनाती है। यही कारण है कि मनुष्य की प्रत्येक कला-संरचना में प्रकृति की अमूल्य साझेदारी है। काव्य में तो प्रकृति का व्यापक स्वरूप है। प्रकृति का सौन्दर्य और प्रकृति के क्रिया-कलाप, काव्य में आलंकारिक-विधान का आधार बनते हैं। काव्य में प्रकृति कभी आश्रय बन कर उपस्थित होती है, तो कभी विषय बनकर। प्रकृति कवि को चित्रात्मक आभा प्रदान करती है।

काव्य का सम्पूर्ण इतिहास प्रकृति के प्रकाश से जगमगा रहा है। आधुनिक काल के अंतर्गत छायावाद में 'प्रकृति' काव्य की अन्तःशक्ति बन कर अभिव्यक्त हुई है। छायावाद के कवि जयशंकर प्रसाद की काव्य - यात्रा का प्रारम्भ ही प्रकृति को केन्द्र मानकर होता है। उनके प्रारम्भिक काव्य संकलन ''लहर'' से चयनित प्रस्तुत कविता उनकी प्रकृतिपरक रचनाओं में से एक श्रेष्ठ रचना है। इस रचना में प्रभात के पूर्व का प्राकृतिक वर्णन किया गया है। प्रभातकाल में प्रकृति में क्या परिवर्तन परिलक्षित होने लगते हैं इन दृश्य-विधानों को मानवीकरण केरूप में चित्रित किया है। वह रूपक अलंकार के रूप में काव्य-वर्णित है। रात बीत गई है और ऊषा रूपी स्त्री आकाश रूपी पनघट में तारों के घड़े डुबा रही है। तारागण अस्तप्राय हैं। सुबह की उजास फैल रही है। पक्षियों के, लताओं के और कलिकाओं के वर्णन में कवि ने अपनी समृद्ध परंपरा का उपयोग किया है।

भवानीप्रसाद मिश्र छायावादोत्तर काल के प्रतिनिधि रचनाकार हैं। उनकी कविताओं में प्रकृति, भावों के उद्दीपन का आधार बनती है। प्रस्तुत कविता में उन्होंने वर्षा का सहज; किन्तु मनोहारी वर्णन किया है। बादलों का आसमान में घिरना, बिजली का चमकना, फिसलती पगडण्डियाँ, रंगों में सजा इन्द्रधनुष, झरनों का झरझरित होना, वर्षा के ये कार्य-व्यापार मानवीय भावनाओं के अनुरूप प्रकट हुए हैं। वर्षा के माध्यम से जीवन की प्रसन्नता सम्पूर्ण कविता में अभिव्यक्त हो रही है। लोकछबियों और लोकजीवन की अनुभूतियों का सघन वर्णन इस कविता में है। इस कविता की लयात्मकता शाब्दिक प्रवाहमयता में प्रस्फुटित हो रही है।

गीत

बीती विभावरी जाग री।
अम्बर-पनघट में डुबो रही-
तारा-घट ऊषा-नागरी।

खग-कुल कुल-कुल सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लायी-
मधु-मुकुल नवल रस-गागरी।

अधरों में राग अमन्द पिये,
अलकों में मलयज बन्द किये–
तू अब तक सोयी है आली!
आँखों में भरे विहाग री।

– जयशंकर प्रसाद

मंगल वर्षा

पीके फूटे आज प्यार के, पानी बरसा री।
हरियाली छा गयी, हमारे सावन सरसा री।

बादल आये आसमान में, धरती फूली री,
अरी सुहागिन, भरी माँग में भूली–भूली री,
बिजली चमकी भाग सखी री, दादुर बोले री,
अन्ध प्राण ही बही, उड़े पंछी अनमोले री,

छन–छन उठी हिलोर, मगन मन पागल दरसा री।
पीके फूटे आज प्यार के, पानी बरसा री।

फिसली–सी पगडण्डी, खिसली आँख लजीली री,
इन्द्र–धनुष–रंग–रंगी, आज मैं सहज रंगीली री,
रुनझुन बिछिया आज, हिला–डुल मेरी बेनी री,
ऊँचे–ऊँचे पेंग, हिंडोला, सरग–नसेनी री,

और सखी सुन! मोर विजन वन दीखे घर–सा री।
पीके फूटे आज प्यार के, पानी बरसा री।

फुर–फुर उड़ी फुहार अलक हल मोती छाये री,
खड़ी खेत के बीच किसानिन कजरी गाये री,
झर–झर झरना झरे, आज मन प्राण सिहाये री,
कौन जन्म के पुण्य कि ऐसे शुभ दिन आये री,

रात सुहागिन गात मुदित मन साजन परसा री।
पीके फूटे आज प्यार के, पानी बरसा री।

– भवानी प्रसाद मिश्र

अभ्यास

अति लघुउत्तरीय प्रश्न -

1. प्रस्तुत गीत में 'तारागण' को किस रूप में चित्रित किया है?
2. कवि ने पनघट किसे कहा है?
3. बिजली की चमक देखकर कवि सखी को क्या सलाह देता है?
4. 'अरी सुहागिन' संबोधन किसके लिए आया है ?
5. सहज रंगीली नायिका किसके रंग में रंगी हुई है?

लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. 'विभावरी' के बीतने पर 'ऊषा नागरी' क्या कर रही है?
2. 'आँखों में भरे विहाग री' संबोधन किसके लिए आया है?
3. खगकुल 'कुल-कुल सा' क्यों बोलने लगा है?
4. आसमान में बादलों के आते ही धरती पर क्या प्रतिक्रिया होती है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. **निम्न पद्यांशों का आशय स्पष्ट कीजिए-**

   (अ) अधरों में राग अमन्द ..... विहाग री।

   (आ) 'फिसली-सी पगडण्डी, ... सरग-नसेनी री।

   (इ) 'बिजली चमकी भाग ..... पानी बरसा री।

2. भोर होते ही प्रकृति में कैसी-कैसी चेतनता आती है? प्रसाद की कविता के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
3. ''किसलय का अंचल डोल रहा'' कहकर कवि क्या कहना चाहता है? स्पष्ट कीजिए।
4. सावन में ग्रामवधू के उल्लास का वर्णन कवि के शब्दों में कीजिए।

काव्य सौन्दर्य -

1. **निम्नलिखित पंक्तियों में से अलंकार पहचानकर लिखिए-**

   बीती विभावरी जाग री।
   अंबर-पनघट में डुबो रही-
   तारा-घट ऊषा-नागरी
   खग-कुल कुल-कुल सा बोल रहा,
   किसलय का अंचल डोल रहा।

2. **निम्नलिखित शब्दों के पर्यायवाची शब्द लिखिए -**

विभावरी, अंबर, ऊषा, मलयज, खग

3. **निम्नलिखित पंक्तियों का भाव सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए -**

- अधरों में राग अमन्द पिये
  अलकों में मलयज बन्द किये
- फिसली-सी पगडण्डी
  खिसली आँख लजीली री,

4. **निम्नलिखित शब्दों में से तत्सम एवं तद्भव शब्द छाँटकर लिखिए -**

अंबर, धरती, दादुर, खग, नवल, अधर, अलक, मोती, सरग

ध्यान दीजिए-

- छन-छन उठी हिलोर, मगन मन पागल दरसा री।
- अरी सुहागिन, भरी माँग में भूली-भूली री।

उपर्युक्त पंक्तियों में 'छन-छन', 'भूली-भूली' शब्दों की पुनरावृत्ति कथन को सौंदर्य प्रदान करने के लिए की गई है। काव्य में सौंदर्य के लिए एक ही शब्द की आवृत्ति को पुनरुक्ति प्रकाश कहते हैं।

5. **कविता में आए पुनरुक्ति प्रकाश के उदाहरण छाँटकर लिखिए।**

और भी समझिए -

''धीरे-धीरे हिम आच्छादन
हटने लगा धरातल से
लगी वनस्पतियाँ अलसाई
मुख धोती शीतल जल से''

उपर्युक्त पंक्तियों में जागने पर अलसाई वनस्पतियों को शीतल जल से मुख धोते हुए बताया गया है। जब कविता में प्रकृति पर मानवीय क्रिया कलापों का आरोप किया जाता है तो वहाँ मानवीकरण अलंकार होता है। इसे इस प्रकार भी परिभाषित करते हैं- जब अचेतन प्रकृति में कवि चेतना आरोपित करता है तब वहाँ मानवीकरण अलंकार होता है।''

6. **कविता में आए मानवीकरण के उदाहरण छाँटकर लिखिए।**

ध्यान दीजिए -

जिस प्रकार किसी मनुष्य के बाह्य रूप, उसकी चाल-ढाल तथा व्यवहार को देखकर उसके गुणों का अनुमान लगाया जा सकता है, उसी प्रकार कविता के बाह्य स्वरूप को देखकर काव्य गुणों की प्रतीति होती है। जैसे मनुष्य में विनम्रता, उदारता, दया आदि गुण देखे जाते हैं, उसी प्रकार काव्य में माधुर्य, प्रसाद और ओज गुण देखे जाते हैं।

पढ़िए और समझिए-

''बीती विभावरी जाग री।
अंबर-पनघट में डुबो रही-
तारा-घट ऊषा-नागरी।''

उपर्युक्त पंक्तियों पर ध्यान दीजिए। जिस गुण विशेष के कारण सहृदय का चित्त आनंद से द्रवित हो जाए, उसमें कठोरता अथवा विरक्ति पैदा न हो, उसे माधुर्य गुण कहते हैं। यह गुण प्राय: श्रृंगार, करुण और शांत रसों में रहता है। इस गुण सम्पृक्त रचना में 'ट' वर्ग के शब्द, पंचम वर्णों के संयोग से बने दीर्घ शब्द व लंबे पद नहीं होते।

और भी जानिए-

जसुमति मन अभिलास करै
कब मेरौ लाल घुटुरुवनि रेंगे कब धरनी पग द्वैक धरै।
कब द्वै दाँत दूध के देखों कब तोतरे मुख वचन झरै।

उपर्युक्त उदाहरण में माता यशोदा की अभिलाषा का चित्रण है। जिस गुण विशेष के कारण सहृदय के चित्त में कोई कविता तत्काल अपेक्षित प्रभाव उत्पन्न करे और भाव स्पष्ट हो जाए वहाँ प्रसाद गुण होता है।

प्र. 7 कविता में आई 'प्रसाद गुण' संपन्न पंक्तियाँ छाँटकर लिखिए।

प्र. 8 'माधुर्य गुण' के दो उदाहरण दीजिए।

और भी समझिए-

शांत रस-

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहें
ता दिन तेरे तन-तरुवर के सबै पात झरि जैहे।
या देही को गरब न करियै, स्यार-काग-गिध खैहै।

उपर्युक्त उदाहरण में जीवन की असारता एवं जगती की क्षणभंगुरता के कारण उत्पन्न वैराग्य का वर्णन है। संसार की असारता का अनुभव होने पर हृदय में तत्वज्ञान या वैराग्य भावना के जाग्रत होने पर शांत रस निष्पन्न होता है। इसका स्थायी भाव 'निर्वेद' है।

करुण रस -

कौरवों का श्राद्ध करने के लिए,
याकि रोने को चिता के सामने

शेष अब है रह गया कोई नहीं
एक वृद्धा एक अंधे के सिवा।

उपर्युक्त उदाहरण में युद्ध के पश्चात् कौरवों का सर्वनाश हो जाने पर धृतराष्ट्र और गांधारी के शोक का वर्णन है। किसी प्रिय व्यक्ति की मृत्यु की संभावना के कारण उत्पन्न शोक के वर्णन में करुण रस की निष्पत्ति होती है। इसका स्थायी भाव शोक है।

प्र. 9 पाठ में आए विभिन्न रसों की पंक्तियों को छाँटकर स्थायी भाव सहित रस का उल्लेख कीजिए।

योग्यता विस्तार

1. क्षितिज पर उगते हुए सूरज को देखिए और प्रसादजी की कविता का सत्य अनुभव कीजिए।
2. वर्षा की बूंदों में तो आप जरूर भीगे होंगे, अपने उल्लास का वर्णन एक अवतरण में कीजिए।
3. बादलों की उमड़-घुमड़ के बीच मयूर की प्रफुल्लता की कल्पना करते हुए चार पंक्तियाँ लिखिए।

शब्दार्थ

गीत

विभावरी = रात्रि *ऊषा नागरी* = ऊषा रूपी स्त्री *किसलय* = कोमल पत्ते *नवल* = नई, *आली* = सखी।

मंगल वर्षा

पीके = अंकुर *दादुर* = मेंढक *हिंडोला* = झूला *सरग-नसेनी* = स्वर्ग की सीढ़ी, बहुत ऊँचे जाना *विजन* = जन रहित (सूना) *अलक* = बाल, मस्तक के इधर-उधर लटकते बाल *परसा* = स्पर्श किया

❋ ❋ ❋

शौर्य और देशप्रेम

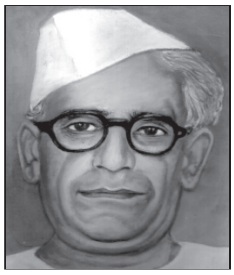

बालकृष्ण शर्मा
`नवीन'

कवि परिचय :

राष्ट्रवादी चिन्तक, जुझारू पत्रकार एवं ओजस्वी कवि के रूप में अपनी अनूठी छवि उकेर लेने वाले पंडित बालकृष्ण शर्मा `नवीन' का जन्म सन् 1897 ई. में शाजापुर जिले के शुजालपुर के मयाना गाँव में हुआ था। आपने गणेशशंकर विद्यार्थी के सानिध्य में पत्रकारिता और महात्मा गांधी जी के संपर्क में गांधीवादी विचारों को आत्मसात् किया। नवीनजी ने स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय भागीदारी की, साथ ही भारतीय संस्कृति, राष्ट्रीय चेतना और नवयुवकों को प्रेरणा देने वाली ओजस्वी रचनाओं का प्रणयन भी करते रहे। उन्होंने प्रेम व श्रृंगारपरक गीत भी लिखे हैं। आपका देहावसान 29 अप्रैल सन् 1960 को हुआ।

`उर्मिला', `कुंकुम', `रश्मिरेखा', `अपलक', `क्वासि', `विनोबा स्तवन', `प्राणार्पण' आदि इनकी प्रमुख कृतियों से इनके भावलोक का सुस्पष्ट परिचय प्राप्त होता है। उनमें स्वतंत्रता संग्राम के दौर में भोगे हुए अनुभव जीवन्त हैं तो उनसे उपजे जागृति के स्वर भी मुखर हैं। प्रेमाकुल संवेदनाएँ मानवीय-भावनाओं से सराबोर हैं। प्रकृति के विविध रूप भी यत्र-तत्र दृष्टव्य हैं।

देशप्रेम और राष्ट्रीय चेतना से स्फूर्त होने के परिणामस्वरूप रचनाओं में ओज प्रखर है तो प्रेमप्रवण अभिव्यक्ति में कोमलता समाहित है। आधुनिक काल की राष्ट्रीय काव्यधारा में `नवीन' का विशिष्ट स्थान है।

पं. बालकृष्ण शर्मा `नवीन' भारतीय संविधान निर्मात्री परिषद् के सदस्य रहे। हिन्दी को राष्ट्रभाषा का स्थान दिलाने के लिए उन्होंने महत्वपूर्ण प्रयास किए।

श्रीकृष्ण सरल

कवि परिचय :

अपने क्रान्तिकारी लेखन से विश्व-कीर्तिमान स्थापित करने वाले पं. श्रीकृष्ण `सरल का जन्म 9 जून सन् 1921 को मध्यप्रदेश के अशोक नगर में हुआ था। बचपन से ही वह कविताएँ लिखने लगे थे। यद्यपि उन्होंने गद्य की सभी विधाओं में लिखा है, फिर भी मूल रूप में वह कवि थे।

श्रीकृष्ण सरल के मन में `क्रान्तिकारियों के प्रति पहले से ही अनुराग था। `शहीद भगतसिंह' पर महाकाव्य लिखने के बाद उन्होंने `अजेय सेनानी चन्द्रशेखर आजाद', `सुभाषचन्द्र', `जय सुभाष', `शहीद अशफाक उल्ला खाँ', `विवेक श्री', `स्वराज्य तिलक', `क्रांति - ज्वाला', `बागीकर्तार' महाकाव्य लिखे। देशभक्ति भावना से ओत-प्रोत सरल जी ने देशभक्तों को ही लेखन का केन्द्र बनाया। उनकी `क्रांति-कथाएँ' भारतीय क्रांतिकारियों की एनसाइक्लोपीडिया है जिसमें लगभग दो हजार क्रांतिकारियों के जीवन-वृत्त सम्मिलित हैं। गद्य के क्षेत्र में सरल जी ने कहानियाँ, उपन्यास, एकांकी, जीवनियाँ और निबन्ध लिखे। गद्य रचनाओं में `कालजयी सुभाष' और `क्रांति-कथाएँ' अत्यन्त विश्रुत हैं। नेताजी सुभाष पर श्री सरल ने पन्द्रह ग्रन्थों का प्रणयन किया। उनका कार्य स्थल उज्जैन रहा।

`सरल जी' का लेखन इतिहास जैसा प्रामाणिक और शोधपूर्ण है। लेखन के लिए उन्होंने देश के भीतर और देश के बाहर अनेक यात्राएँ कीं। उनका संपूर्ण जीवन राष्ट्र के लिए समर्पित था। उन्होंने स्वयं लिखा है -

`कर्त्तव्य राष्ट्र के लिए समर्पित हों अपने, हो इसी दिशा में उत्प्रेरित चिन्तन-धारा
हर धड़कन में हो राष्ट्र, राष्ट्र हो सांसों में, हो राष्ट्र-समर्पित मरण और जीवन सारा।'

`जिनकी साहित्य साधन गहन तपस्या थी, राष्ट्र जिनकी सांसों में बसता था, जो जीवित शहीद है, ऐसे सरल जी का देहान्त 2 सितंबर 2000 को उज्जैन में हुआ।

केन्द्रीय भाव -

'देश' मात्र एक शाब्दिक सत्ता नहीं है, बल्कि वह व्यापक भू-भौतिक और भावमयी संरचना है। इसमें इतिहास, संस्कृति, समाज और सम्पूर्ण जीवन पद्धति अन्तर्निहित है, जो राष्ट्र की सीमाओं के भीतर सक्रिय रहती है। देश की सीमाओं में ही व्यक्ति के जीवन का बहुमुखी विकास होता है। देश हमें इतना देता है कि हम उसके ऋण से कभी मुक्त नहीं हो सकते हैं। देश चूँकि हमें मातृवत् पालता-पोसता और हमें विकास की दिशाएँ देता है इसीलिए हमने देश को मातृभूमि के रूप में भी स्वीकार किया है। मातृभूमि के प्रति हमारा समर्पण और हमारा त्याग उसके प्रति हमारे प्रेम का ही परिपाक है। मातृभूमि की रक्षा की सक्रियता और मातृभूमि के गुण गौरव का गायन करना हमारे मातृभूमि के प्रति किए गए प्रेम के ही आधार तत्व हैं।

भावना और कर्त्तव्य के संपुट में ही देश प्रेम पलता है। देश की रक्षा और देश की प्रतिष्ठा के लिए जिस पराक्रम की आवश्यकता होती है- वही पराक्रम देश प्रेम के अंतर्गत शौर्य रूप में प्रकट होता है। देशवासियों के आत्म गौरव का भाव उनके शौर्य प्रदर्शन से ही संभव है। इसलिए देश प्रेम से संबलित कविताओं में शौर्य की उद्‌भावना आत्मसात हो उठती है।

हिन्दी साहित्य में शौर्य परक कविताओं की रचना प्रचुर मात्रा में हुई है। हिन्दी का आदिकाल इस तरह की कविताओं से भरपूर है। आधुनिक काल में पुनर्जागरण की बेला में देश-प्रेम और शौर्य की कविताओं की रचनाओं का व्यापक परिदृश्य उपलब्ध होता है।

बालकृष्ण शर्मा नवीन आधुनिक युग के ऊर्जावान कवि हैं। उनके काव्य में विप्लव की हुंकार प्राप्त होती है। देश प्रेमकी उत्ताल तरंगें उनके काव्य सरोवर में निरंतर उठती हैं। वे अपने आक्रोश को प्रकट करने के लिए अपनी एक भाषा गढ़ते हैं। उनके ओजस्वी काव्य से शौर्य की अग्नि कणिकाएँ झंझारित होती हैं। वे रूढ़ियों को, निर्बलताओं को इस समाज से भस्म करना चाहते हैं।

संकलित कविता में उन्होंने स्पष्ट किया है कि ध्वंस से ही सृजन की संभावना प्रकट होती है। असामाजिक प्रथाओं को ध्वंस करना उनका लक्ष्य है। इस कविता में वे व्यक्ति को उसके साहस और उसके दृढ़ निश्चय से परिचित कराते हुए स्पष्ट करते हैं कि उसका लक्ष्य विजय प्राप्त करना ही है। वह अनश्वर है। उसे अपने मन से निर्बलता का भाव त्यागना है।

श्री कृष्ण सरल का संपूर्ण काव्य देश-प्रेम से समन्वित भावनाओं का कोश है। सरल जी कहते हैं कि मेरे देश के गौरव तुम्हें यह स्मरण रखना है कि हमें स्वाधीनता पाने की कीमत चुकानी पड़ी है। इस स्वतंत्रता की रक्षा का भार भी इस देश के निवासियों पर है। देश की सम्पूर्ण समृद्धि का भवन शहीदों के उत्सर्ग की नींव पर खड़ा है। देश की संस्कृति और देश की रक्षा का दायित्व हमारे ऊपर ही है। इसलिए हमें इस हेतु सदैव तत्पर और सजग रहना है। भाषा में ओज गुण की दीप्ति से समन्वित यह कविता राष्ट्र प्रेम और शौर्य भाव को एक साथ प्रकट करती है।

अरे तुम हो काल के भी काल

कौन कहता है कि तुमको खा सकेगा काल?
अरे? तुम हो काल के भी काल अति विकराल?
काल का तव धनुष, दिक् की धनुष की डोर,
धनु-विकम्पन से सिहरती सृजन-नाश-हिलोर!

तुम प्रबल दिक्-काल-धनु-धारी सुधन्वा वीर
तुम चलाते हो सदा चिर चेतना के तीर!

क्या बिगाड़ेगा तुम्हारा, यह क्षणिक आतंक?
क्या समझते हो कि होगे नष्ट तुम अकलंक
यह निपट आतंक भी है भीति-ओत-प्रोत!
और तुम? तुम हो चिरन्तन अभयता के स्रोत!!

एक क्षण को भी न सोचो कि तुम होगे नष्ट,
तुम अनश्वर हो! तुम्हारा भाग्य है सुस्पष्ट!

चिर विजय दासी तुम्हारी, तुम जयी उद्‌बुद्ध,
क्यों बनो हतआश तुम, लख मार्ग निज अवरुद्ध?
फूँक से तुमने उड़ायी भूधरों की पाँत,
और तुमने खींच फेंके काल के भी दाँत

क्या करेगा यह विचारा तनिक-सा अवरोध?
जानता है जग, तुम्हारा है भयंकर क्रोध!

जब करोगे क्रोध तुम, तब आयेगा भूडोल
काँप उट्ठेंगे सभी भूगोल और खगोल,
नाश की लपटें उठेंगी गगन-मण्डल बीच
भस्म होंगी ये असामाजिक प्रथाएँ नीच!

औ, पधारेगा सृजन कर अग्नि में सुस्नान,
मत बनो गत आश! तुम हो चिर अनन्त, महान!

– बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

राष्ट्र के श्रृंगार!

राष्ट्र के श्रृंगार! मेरे देश के साकार सपनों!
देश की स्वाधीनता पर आँच तुम आने न देना।
जिन शहीदों के लहू से लहलहाया चमन अपना
उन वतन के लाड़लों की

याद मुर्झाने न देना।
देश की स्वाधीनता पर आँच तुम आने न देना।

तुम न समझो, देश की स्वाधीनता यों ही मिली है,
हर कली इस बाग की, कुछ खून पीकर ही खिली है।
मस्त सौरभ, रूप या जो रंग फूलों को मिला है,
यह शहीदों के उबलते खून का ही सिलसिला है।
बिछ गये वे नींव में, दीवार के नीचे गड़े हैं,
महल अपने, शहीदों की छातियों पर ही खड़े हैं।
नींव के पत्थर तुम्हें सौगन्ध अपनी दे रहे हैं–
जो धरोहर दी तुम्हें

वह हाथ से जाने न देना।
देश की स्वाधीनता पर आँच तुम आने न देना।

देश के भूगोल पर जब भेड़िये ललचा रहे हों–
देश के इतिहास को जब देशद्रोही खा रहे हों–
देश का कल्याण गहरी सिसकियाँ जब भर रहा हो–
देश के निर्माण को, जब ध्वंस डटकर चर रहा हो
आग–यौवन के धनी! तुम खिड़कियाँ शीशे न तोड़ो,
भेड़ियों के दाँत तोड़ो, गर्दनें उनकी मरोड़ो।
जो विरासत में मिला, वह खून तुमसे कह रहा है–
सिंह की खेती

किसी भी स्यार को खाने न देना।
देश की स्वाधीनता पर आँच तुम आने न देना।

तुम युवक हो, काल को भी काल से दिखते रहे हो,
देश का सौभाग्य, अपने खून से लिखते रहे हो।